इंडिया ग्रीन्स पार्टी का घोषणा-पत्र

+

भारत के पर्यावरण का पतन

2014-2019

मतदाताओं, मीडिया और लोकसभा चुनाव के उम्मीदवारों के विचारार्थ

श्री. सुरेश नौटियाल
अध्यक्ष

श्री. रझा हैदर
सेक्रेटरी जनरल

प्रकाशक: इंडिया ग्रीन्स पार्टी
अखिल भारतीय हरित पक्ष: स्थापना: नवंबर 2018
https://indiagreensparty.org/
indiagreensparty@gmail.com

भारत के पर्यावरण का पतन... 2014–2019

@ संतोष शिंत्रे

भारत में पर्यावरणीय आंदोलन और 'भारत ग्रीन्स पार्टी' को समर्पित।

नागरिकों, मीडिया और उम्मीदवारों को जागृत करने के लिए
स्वतंत्र और प्रचुर मात्रा में उपयोग को प्रोत्साहित किया जाता है।

स्वैच्छिक योगदान रू.25/-

'इंडिया ग्रीन्स पार्टी का घोषणा पत्र' और 'भारत के पर्यावरण का पतन– 2014 से 2019' यह पुस्तिका एकत्र रूप में देने के पीछे उद्देश्य

भारत में प्रकृति एवं पर्यावरण के सभी मानवीय एवं अन्य घटकों ने पाँच सालों में अपरिवर्तनीय नुक़सानों को झेला है। विद्यमान केंद्र सरकार विकास के अपने गलत मानकों को लागू करने के चलते पर्यावरणीय सुशासन के नियमों को पैरों तले रौंदती रही। पर्यावरण से संबंधित किसी भी विषय में चुनावी योग्यता (एलेक्टोरल मेरिट) न होने के कारण इस सरकार ने अपने अंधे विकास का एजेंडा नृशंस तरीके से लागू किया है। ऐसी परिस्थिति को कम–से–कम इसके बाद तो टालना आवश्यक है। चाहे किसी भी दल की सरकार केंद्र में हो, फिर भी उन्हें यह मान कर नहीं चलना चाहिए कि पर्यावरण की इस चोरी में जनता की मूक सम्मति हैं। इसीलिए इन दो दस्तावेजों की आवश्यकता थी। कम–से–कम इसके आगे तो इन मुद्दों में चुनावी योग्यता दिखाई देगी। इंडिया ग्रीन्स पार्टी के उद्देश्यों में से यह एक महत्वपूर्ण भाग है। ऐसा होने के लिए नागरिकों की पर्यावरणीय साक्षरता बनानी होगी। तभी मायबाप मतदाता अपने उम्मीदवारों को यह प्रश्न मतपेटियों के माध्यम से पूछ सकेंगे। उनके निवारण हेतु आग्रह करेंगे। जब तक जनता पीछे न पड़ी हो तब तक राजनैतिक लोग किसी भी प्रश्न की ओर ध्यान नहीं देते। जनसंख्या विस्फोट के विषय में भी किसी राजनैतिक दल ने कालबद्ध कार्यक्रम की घोषणा नहीं की। भारत के पर्यावरण का पतन –2014 से 2019, यह पुस्तिका इसी साक्षरता को बनानेका एक प्रामाणिक प्रयत्न है। यह हुआ एक भाग ।

इस पुस्तिका में उपस्थित किए गए प्रश्नों पर उपाय बताने वाला इंडिया ग्रीन्स पार्टी का घोषणापत्र इसीलिए साथ में देना उचित लगा। केवल 2019 ही नहीं तो उसके बाद आने वाले सभी चुनावों में प्रस्तुत घोषणापत्र हमारे सिद्धांतों को प्रस्तुत करता रहेगा। चुनावों के विभिन्न स्तरों के अनुसार (स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं, राज्यों, केंद्र) प्रश्नों के स्वरूप बदलते जाएंगे। पर सिद्धान्त वही रहेंगे, यह महत्वपूर्ण है। मतदाता अपने उम्मीदवारों का ध्यान प्रस्तुत प्रश्नों की ओर आकृष्ट करने के लिए मजबूर करते रहेंगे। विभिन्न प्रसार माध्यम भी इसमें के सभी विषयों की उपेक्षा न कर निरंतर रिपोर्टिंग करते रहें। और चुनावी प्रक्रिया में उम्मीदवार अपनी पर्यावरणीय साक्षरता समय रहते बढ़ाएँ । प्रस्तुत दस्तावेज़ के मुद्दों पर विभिन्न उम्मीदवारों के क्या कहा यह आपके सामने लाने की कोशिश इंडिया ग्रीन्स पार्टी पूरी तरह से करेगी।

अनुक्रमणिका

घोषणा–पत्र :	ग्रीन पार्टी ऑफ इंडिया	5
	इंडिया ग्रीन्स की प्रस्तावना	16
	भूमिका और प्रेरणा	18
अध्याय 1 :	झूठी वाहवाही, सच्ची निंदा	19
अध्याय 2 :	तथ्य दिखाने वाले कुछ आंकड़ें	22
अध्याय 3 :	वैश्विक पर्यावरण प्रदर्शन सूचकांक के घटक और उपघटक	26
अध्याय 4 :	वायु की गुणवत्ता	28
अध्याय 5 :	पानी की शुद्धता एवं स्वच्छता	30
अध्याय 6 :	भारी धातुओं से होने वाला प्रदूषण	33
अध्याय 7 :	जैव विविधता और विभिन्न अधिवासों की वर्तमान स्थिति	36
अध्याय 8 :	भारतीय वनों की दुरावस्था	40
अध्याय 9 :	मछली पकड़ की गिरती उत्पादकता	43
अध्याय 10 :	जलवायु और ऊर्जा की परिस्थिति	46
अध्याय 11 :	वायु के प्रदूषक	49
अध्याय 12 :	जलस्रोतों की परिस्थिति	51
अध्याय 13 :	कृषि की धारण क्षमता	54
	उपसंहार	56

•••

घोषणा पत्र– इंडिया ग्रीन्स पार्टी

(https://indiagreensparty.org)

प्रकृति –पर्यावरण की रक्षा की शपथ लेकर 18 नवंबर 2018 के दिन 'इंडिया ग्रीन्स पार्टी' की स्थापना हो चुकी है। राजनैतिक दल के रूप में चुनाव आयोग में पंजीयन हेतु आवाश्यक कागजात दिसंबर 2018 में प्रस्तुत किए जा चुके हैं। अत्यंत जटिल पंजीयन प्रक्रिया अब पूर्ण हो चुकी है। मई–जून 2019 तक चुनाव आयोग इस दल को अखिल भारतीय दल के रूप में मान्यता दे देगा। भारत के प्राकृतिक पर्यावरण को लूटनेवाला, अंधवत चल रहे विकास को रोकने के लिए यह दल प्रतिबद्ध है। देश की चुनावी प्रक्रिया में यहाँ के पर्यावरणीय प्रश्नों को मुख्य स्थान देना ही इंडिया ग्रीन्स पार्टी की स्थापना का कारण है। पर्यावरणीय प्रश्नों को लेकर लगभग सभी राजनैतिक दलों की उदासीनता और इन प्रश्नों के विषय में उनकी गंभीरता (?) सर्वश्रुत है। इंडिया ग्रीन्स पार्टी यह चित्र बदलना चाहती है।

2019 के लोकसभा चुनाव यह दल नहीं लड़ सकेगा किन्तु आम मतदाताओं तक पहुँचकर उनको प्रकृति और पर्यावरण के प्रश्नों का महत्व समझाने हेतु, हरित घोषणापत्र में उल्लिखित विभिन्न प्रश्नों को लेकर उम्मीदवारों की भूमिका क्या है यह जानना और घोषणा पत्र को अंशतः (कम–से–कम 50% से अधिक) समर्थन देनेवाले उम्मीदवारों को ही अपना मत देने के लिए लोगों को और प्रसार माध्यमों को आवाहन करने के लिए इंडिया ग्रीन्स पार्टी सर्वतोपरी प्रयत्न करेगी।

देश में पर्यावरण के आज की ज्वलंत समस्याओं को चुनावों के अखाड़े मे स्थान दिलवाने की दृष्टि से उत्तम अवसर के रूप में इंडिया ग्रीन्स पार्टी इस चुनाव की ओर देख रही है।

इस घोषणापत्र में प्रस्तुत मुद्दों पर आवाज उठाकर उम्मीदवारों को इन समस्याओं के निवारण हेतु आप क्या कदम उठाएंगे, ऐसा सवाल करने के लिए और वैसे कार्य करने के लिए वचनबद्ध होने वाले उम्मीदवारों को ही चुनकर देने के लिए हम जनता को आवाहन देते हैं।

भविष्य निश्चित ही हरित है! हरित ही भविष्य है!

जय भारत!

हरित राजनीति के मौलिक सिद्धान्त

पर्यावरण-संबंधी प्रश्नों के अराजक तत्व में 'राजनैतिक हल' भी एक पहलू हो सकता है । इस विचार से ही विश्व के अनेक देशों में 'हरित राजनीति' का आरंभ हुआ। अपने दृढ़ दर्शन, मौलिक सिद्धांत्न और उपायों वाले विचार के रूप में यह संकल्पना विश्व भर में अपनी पैठ जमा रही है।

शुरुआती हरित राजनैतिक दल तस्मानिया (1972), न्यूझीलैंड (1972) एवं ग्रेट ब्रिटन (1973) जैसे देशों में स्थापित हुए। चुनाव जीतकर संसद में प्रवेश करने वाला पहला जनप्रतिनिधि था स्विटझरलैड का 1979 में । राजनैतिक दल के रूप में प्रचंड यश अर्जित कर सरकार बनाने में सहभाग देने की घटना हुई जर्मनी में सन 1980-84 में। तब से लेकर आज तक यह संकल्पना 91 देशों में अपना पैठ जमा चुकी है। और कुछ 19 देशों में इसी मार्ग पर है। किन्तु अस्तित्व टिकाकर संसदीय प्रणाली में यश का चोगा केवल ऑस्ट्रिया, बेल्जियम, फिनलैंड, जर्मनी, इटली, लक्सेंबर्ग, नीदरलैन्ड, स्वीडन और स्विटझरलैंड में पहना।

12 अप्रैल, 2001 के दिन विश्व के प्रकृतिवादी राजनैतिक दलों का एक अनौपचारिक संगठन ऑस्ट्रेलिया के कनबेरा में स्थापित हुआ्। उसी समय वैश्विक हरित राजनीति का एक चार्टर तैयार किया गया । इस चार्टर ने छः मार्गदर्शक सिद्धांतों को प्रस्तुत किया- पर्यावरणीय प्रज्ञा (बुद्धिमत्ता), सामाजिक न्याय, भागीदारी प्रजातंत्र, अहिंसा, धारण क्षमता, सभी विकिधताओं के प्रति आदर- ये थे वे मार्गदर्शक तत्व।

ये 6 तत्व हरित राजनीति के आधार स्तम्भ माने जाते हैं।

1) पर्यावरणीय प्रज्ञा / बुद्धिमत्ता : मानवीय कार्यों का प्राकृतिक पर्यावरण पर, जीवसृष्टि पर एवं पृथ्वी पर होनेवाला प्रतिकूल परिणाम कम करना और अन्य सजीवों के साथ अधिक सामंजस्यपूर्ण तरीके से रहने के लिए नए एवं वैकल्पिक मार्गों को ढूँढना ही इस बुद्धिमत्ता की प्रमुख विशेषता है।

2) सामाजिक न्याय : वर्ग, वंश, लिंग और संस्कृति पर आधारित भेदों को पूर्णतः नकारते हैं। वैश्विक समानता का दृष्टिकोण।

3) भागीदारी प्रजातंत्र : सामाजिक परिवर्तन के उद्देश्यों तक पहुँचने के लिए एकमेव प्रशासकीय मापदंड। हरित दलों में कोई भी 'साहब' नहीं होते। संगठन के अंदर सत्ता के केंद्र खड़े न हों, निर्णय -प्रक्रिया अधिक विकेंद्रित हो और अधिक-से-अधिक सदस्यों की भागीदारी हो, यह देखा जाता है।

4) अहिंसा : विरोधियों को हराने के साधन के रूप में हिंसा का प्रयोग का विरोध। हरित दर्शन गांधी एवं क्केकर पंथ के विचारों पर आधारित है।

5) धारण क्षमता : पृथ्वी पर सीमित संसाधनों का अगली पीढीयों को जबाबदारी से उपयोग कर शाश्वत तरीके से सौंपना संभव है, यह विश्वास और उसके हिसाब से कार्य करना ।

6) सभी प्रकार की विविधताओं के प्रति आदर : भाषिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक एवं जैव ऐसी सभी प्रकार की विविधताओं का हरित राजनीति आदर करती है।

यह सभी 6 स्तंभ परस्पर एक-दूसरे पर निर्भर हैं और उनमें निरंतर नैतिक व्यवस्था का एक धागा है। ऐसा हरित दलों का मानना है।

यह घोषणा पत्र कार्यान्वयन, कानून और न्याय इन सभी प्रशासकीय स्तरों पर पर्यावरण की विभिन्न समस्याओं पर क्या करना आवश्यक है, यह स्पष्ट करता है। संपूर्ण विकास की नींव पानी और कृषि से संबंधित है और इसीलिए इन क्षेत्रों में क्या सुधार आवश्यक है, इस बारे में हमारी भूमिका से शुरू करते हैं :

पानी और कृषि

* नदी-जोड़ परियोजनाओं तथा अन्य किसी भी प्रकार के पानी के स्रोतों के निजीकरण के हम स्पष्ट खिलाफ हैं।
* नदी पारिस्थितिकी तंत्र एवं भूपटल पर बहाने वाले सभी प्रवाहों के प्राकृतिक प्रदेशों का महत्व हम अधोरेखित करते हैं । इसके लिए उद्गम से लेकर समुद्र तक की सभी प्राकृतिक आच्छादनों का रखरखाव और उनमें वृद्धि होनी चाहिए। विशेषतः पारिस्थितिकी तंत्र के दृष्टिकोण से नदियों का व्यवस्थापन होना चाहिए।
* पानी के उपयोग के लिए अग्रलिखित क्रमवार प्राथमिकताएँ तय होनी चाहिए- प्राकृतिक सेवाएँ, पीने का पानी, घरेलू आवश्यकताएँ, कृषि और पालतू जानवरों के लिए, उद्योगों और फिर पुनरूपयोग ।
* भूजल पुनर्भरण हेतु उसके शाश्वत उपयोग को सामने रखकर, लाभार्थी और ग्राम सभाओ से चर्चा कर मार्गदर्शक तत्व विकसित करना आवश्यक है। आधुनिक तंत्रज्ञान की सहायता से संप्रति उपलब्ध कूपनलिकाओं का

उपयोग एवं उसमें होती जा रही वृद्धि पर नियंत्रण रखना आवश्यक है ।

* कृषि के सभी प्राकृतिक प्रकारों का क्रमवार विकास करना और रासायनिक कीटनाशकों, वृद्धि हेतु उपयोग की जाने वाले उत्प्रेरकों, रासायनिक उर्वरकों एवं कृषि कार्यों में बहुत भारी बड़ी मशीनों के प्रयोग का हम विरोध करते हैं।
* कृषि अवशिष्टों का स्थान पर ही पुनर्चक्रीकरण करने के लिए हमारा समर्थन रहेगा और प्रोत्साहन दिया जाएगा। सेंद्रिय खेती के सभी उत्पादनों की गुणवत्ता का स्वयंपरीक्षण विकसित करने के लिए हमारा समर्थन रहेगा। पानी और मिट्टी के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष निर्यात पर प्रतिबंध लाना चाहिए।
* खेती में कीट नियंत्रण, परागण एवं उत्पादन में वृद्धि हेतु जंगलों एवं दुर्गम स्थानों को संरक्षित करने के लिए हम समर्थन करते हैं।
* प्राकृतिक तरीके से की जाने वाली खेती के लिए अनुदान मिलना आवश्यक है। इससे रोजगार के अवसरों में वृद्धि होती है ।
* बड़ी (बृहत) सिंचाई और जलागम प्रबंधन परियोजनाओं के विकास के लिए आरक्षित निधि का प्रावधान वर्तमान में 80:20 से 50:50 पर लाया जायेगा।
* जलाक्रांत एवं क्षारयुक्त भूमियों के पुनरुद्धार हेतु केवल सेंद्रिय खेती के प्रयत्नों का हम समर्थन करते हैं।
* सिचाई के पानी के कीमतों की वर्तमान व्यवस्था हमें नामंज़ूर हैं। पानी के स्रोत से खेत का अंतर और फसल उगाने के वर्तमान तरीकों के स्वरूप के आधार पर ही पानी की कीमत तय होनी चाहिए।
* आनुवांशिक रूप से सुधारित फसलें (पारजीनी किस्में) एवं अन्न को प्रोत्साहन देने वाली नीतियों का हम विरोध करते रहेंगे। ऐसी फसलों पर पारजीनी क़िस्मों की पहचान अंकित होनी चाहिए।
* स्थानीय आवश्यकताओं एवं स्थानीय जलवायु के घटकों को ध्यान में रखकर फसल उगाने की तकनीकों को विकसित किया जाना चाहिए्। इस क्षेत्र में काम करने वाले उचित अभिकरणों से चर्चा कर ग्रामसभा एवं स्थानीय संस्थाओं ने इसका जिम्मेदारी लेनी चाहिए।
* शुष्क खेती द्वारा उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिए जलवायु परिवर्तन से समायोजन कर सकते वाली फसलों की क़िस्मों को निश्चित किया जाना चाहिए।

* प्राकृतिक तरीके से की जाने वाली खेती की शिक्षा और प्रशिक्षण पर कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा ज़ोर दिया जाना चाहिए।

नगरीय प्रश्न एवं स्वास्थ्य

* प्रादेशिक विकास प्राधिकारणों की स्थापना का हम समर्थन करेंगे। एवं यह देखा जाएगा कि प्रादेशिक नियोजन आंतरिक भागों के विकास से जुड़ा हुआ है । यह सुनिश्चित किया जाएगा कि शाश्वत एवं पर्यावरणीय दृष्टि से अविरत विकास के सिद्धांतों पर वे आधारित होंगे। आंतरिक भागों की धारण क्षमता एवं संसाधनों की पोषण क्षमता को शहरों की वृद्धि से जोड़ा जाएगा। इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि ग्रामीण भागों और माध्यम आकारों के गांवों में रोजगार के अवसरों का संतुलित विकास हो। इससे महानगरों में होने वाली महाकाय वृद्धि अपने आप ही रोकी जाएगी।
* परिवहन यातायात कम-से-कम करने के सभी प्रयत्नों को प्रोत्साहन दिया जाएगा। सार्वजनिक परिवहन एवं गैर-मोटर चालित परिवहन को बढ़ावा देने वाली शाश्वत विकास की नीतियों एवं निजी वाहनों के यातायात पर नियंत्रण रखने वाली नीतियों को प्रोत्साहित किया जाएगा। शहरी भागों की नदियों, नालों एवं खुले स्थानों को संरक्षित किया जाएगा और विकास क्षेत्रों से उन्हें दृढ़तापूर्वक छोड दिया जाएगा।
* पानी की स्रोतों, शहरों में विश्राम करने के स्थानों का निजीकरण नहीं किया जाएगा।
* शहरी कचरे का उसी स्थान पर प्रबंध हो इसका उत्तरदायित्व उपभोक्ताओं पर रहेगा। जैव, विघटनशील, पुनर्चक्रीकरणीय, जोखिम से भरा, इलेक्ट्रोनिक, जैव चिकित्सकीय अवशिष्ट ऐसे विभिन्न प्रकारों में कचरे का वर्गीकरण कर यह प्राप्त किया जा सकता है । स्वच्छता की आदत नागरिकों में आत्मसात करने का हम समर्थन करेंगे। कचरे का निर्माण करने वाला ही जबाबदार है, इसी सूत्र को हम प्रत्यक्ष रूप से लाएँगे। ('नुकसान के लिए प्रदूषण करने वाला भुगतान करे' और उत्पादन के सम्पूर्ण जीवन चक्र की जबाबदारी उत्पादक लें)
* शहरी भागों में इलेक्ट्रॉनिक कचरा संकलित कर उस पर प्रक्रिया करनेवाली वार्डनिहाय पर्याप्त केन्द्रों की स्थापना की जाएगी।

ऊर्जा और प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन

* ऊर्जा और प्राकृतिक संसाधनों की शाश्वतता पर ज़ोर– शाश्वत एवं अपारंपारिक ऊर्जा के लिए उपलब्ध संसाधन, उपलब्धता की अपेक्षा कम मांग पर आधारित ऊर्जा नियोजन, शाश्वत ऊर्जा उत्पादन को प्रोत्साहन, पारंपारिक ऊर्जा स्रोतों से अपारंपारिक स्रोतों की ओर क्रमशः संक्रमण, आदि विषयों पर सर्वेक्षण एवं सूचना के आदान–प्रदान का पारदर्शी तंत्र।
* प्राकृतिक प्रकाश संश्लेषण पर आधारित ऊर्जा रूपांतरण प्रक्रिया पर निर्भर रहने पर ज़ोर । किसी संसाधन को उसके प्राकृतिक स्वरूप में उपयोग में लाना और उसके रूपान्तरण को टालने पर ज़ोर । ऊर्जा हेतु वृक्षारोपण को बढ़ावा ।
* कार्बन पदचिन्ह (फूटप्रिंट) के स्वीकार्य स्तरों को व्यक्तियों और उद्योगों को बताकर उससे कम कार्बन उत्सर्जित करने वालों को प्रोत्साहन भत्ता और अधिक करने वालों को कर लागू करना या फिर दंड देना।
* ऊर्जा के उपयोग की सीमा तय की जाएगी। साधारण जीवन शैली के लिए आवश्यक ऊर्जा का न्यूनतम स्तर तय कर यह ऊर्जा अनुदानित दर पर खरीदी जा सकेगी। इससे अधिक ऊर्जा का उपयोग करने पर पर्यावरण मूल्य के साथ–साथ उसे अधिक दर से खरीदना भी पड़ेगा। सभी प्राकृतिक संसाधनों के लिए यह नियम लागू होगा। विलासिता की वस्तुओं पर अधिक कर अथवा एक से अधिक घरों का स्वामित्व होने पर ब्याज का दर अधिक, ऐसे नियमों को लागू किया जाएगा।
* ऊर्जा के विकेन्द्रीकरण, प्राकृतिक संसाधनों के उत्पादन के उत्पादन और प्रबंधन को प्रोत्साहन देंगे। स्थानीय स्वराज्य संस्थाओं ने स्थानीय ऊर्जा और प्राकृतिक संसाधनों के उत्पादन और प्रबंधन–संबंधी नीतियों पर ध्यान देना चाहिए। स्थानीय उत्पादन, उपयोग, पुनरूपयोग एवं कचरा प्रबंधन को बढ़ावा देना आवश्यक है। आत्म–निर्भर गांवों, गटों का नियोजन, संसाधनों का उपयोग करने वाली संगठनाओ एवं क्षमता विकास हेतु योजनाबद्ध कार्यक्रम स्थानीय स्तर पर तैयार करना आवश्यक है।
* प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग अथवा उनका खाली पड़ा रहना जैसी घटनाओं को टालना चाहिए (उदा. जमीन का परती रहना, पानी का अपव्यय, इत्यादि)। वर्तमान में उपयोग में न ली जाने वाली इमारतों का

उपयोग करना क्योंकि इमारतों में प्राकृतिक संसाधन अनुपयोगी हो जाते हैं।

* प्राकृतिक संसाधनों पर मानवेत्तर प्राणियों का भी अधिकार है। इस अधिकार को मान्य करना एवं उसके लिए आवश्यक कानूनन उपायों की योजना बनाना।
* नीति के तौर पर प्राकृतिक संसाधनों की पुनर्व्यवस्था करना– पर्यावरणीय पुनर्व्यवस्थापन के स्वरूप को विकसित कर उन्हें प्रत्यक्ष रूप से लागू करना
* शाश्वत जीवनशैली को बढ़ावा देने के लिए व्यापक एवं व्यावसायिक स्वरूप के लोकप्रिय अभियानों को चलाना– प्रतिष्ठा को शाश्वतता से जोड़ना ।
* चुनावों में खड़े उम्मीदवारों की पर्यावरणीय निर्देशांक और उस संदर्भ की भूमिका– उम्मीदवारों का चयन कराते समय दलों और मतदान करते समय सजग नागरिकों को उस उम्मीदवार का पर्यावरणीय दृष्टिकोण विचार में लेना चाहिए।
* स्थानीय टाउनशिप्स के स्तर पर बिजली उत्पादन को बढ़ावा देंगे।
* कोई भी औद्योगिक परियोजना/ प्रक्रिया मंजूर करते समय सावधानी बरतनी चाहिए। प्रदूषण करने वाला नुकसान की भरपाई देगा, यह तत्व सब जगह लागू नहीं होना चाहिए। बल्कि 'सावधानी तत्व' (Precautionary principle) अधिकतम मात्रा में लागू होना चाहिए।

संरक्षित प्रदेशों, जंगल, वन भूमि और वन्यजीवन

इंडिया ग्रीन्स पार्टी की दृष्टि से वन सर्वाधिक मूल्यवान संसाधन हैं । वे कार्बन के भंडार हैं, पारिस्थितिकी तंत्र की विभिन्न सेवाओं के पूर्तिकार हैं और पर्यावरणीय पूंजी हैं। इसीलिए यह घोषणापत्र निम्नलिखित बिन्दुओं का आग्रहपूर्वक समर्थन करता है।

* असली 33% वनाच्छादन संरक्षित करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय वनीकरण कार्यक्रम (उनमें एक ही प्रकार के पेड़ या खेती का समावेश नहीं) । इसको व्यापक तरीके से लागू करना। इसले लिए निधि का तुरंत प्रावधान करना और उचित तरीके से बंटवारा करना।
* देश के कुल भूभाग में से कम–से–कम 5% क्षेत्र संरक्षित प्रदेश के रूप में रहे, यह सुनिश्चित करना। वर्तमान में इन प्रदेशों का दर्जा रद्द होने अथवा

इन क्षेत्रों का संकुचित होने के कारण ऐसे क्षेत्र 5% से भी कम रह गए हैं।

* पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील प्रदेश सख्ती से संरक्षित कर उसके चारों ओर 10 किमी की परिधि का क्षेत्र भी संरक्षित प्रदेश के रूप में घोषित करना।
* संरक्षित प्रदेशों और उनके आसपास के क्षेत्रों में मवेशियों और मनुष्यों के हस्तक्षेप पर प्रतिबंध लाना। वन्यजीवों में संसर्गजन्य रोगों का संक्रमण न फैले इसके लिए इन प्रदेशों के मवेशी और पालतू जानवरों का टीकाकरण करना। वर्तमान में यह विषय तो जैसे सरकार द्वारा छिपाया जा रहा है ।
* मनुष्य और प्राणियों के बीच संघर्ष होने पर जख्मी अथवा पकड़े गए प्राणियों की परवाह करने के लिए राज्य निहाय पशु कल्याण केन्द्रों की स्थापना करना।
* ऐसे संघर्षों से पीड़ित लोगों को देशभर में समान नुकसान भरपाई की नीति
* संरक्षित प्रदेशों और पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील प्रदेशों का प्रबंधन केंद्र के पास हो, राज्यों के पास नहीं।
* तस्करी के साथ –साथ जंगलों से संबंधित सभी गुनाहों के लिए स्वतंत्र वन्य कारागारों एवं वन्य न्यायालयों की स्थापना । वर्तमान में पुलिस द्वारा भ्रष्टाचार एवं कुल मिलाकर न्यायिक व्यवस्था में होने वाले विलंब के कारण जंगलों के प्रशासन पर प्रतिकूल परिणाम डाल रहा है।
* वनों पर निर्भर स्थानीय लोगों के हक, कर्तव्य और फायदे की उनके कल्याण की दृष्टि से नए सिरे से व्याख्या करने की आवश्यकता है।
* वन्य प्राणी संवर्धन की ओर रोजगार निर्माण की दृष्टि से देखना चाहिए। और स्थानीय युवकों को प्रोत्साहित करना चाहिए।
* वन विभाग के कर्मचारियों के उत्तरदायित्व और प्रदेशों की छोटे क्षेत्रों में पुनर्रचना कर उनकी कार्यक्षमता बढ़ानी चाहिए।
* छोटे सस्तन प्राणी और भारत में पाए जाने वाले प्राणियों और वनस्पतियों की दुर्लक्षित प्रजातियों के लिए स्वतंत्र प्राधिकरण की स्थापना– आइयूसीएन (IUCN) की सूची में विलुप्त, जंगलों में विलुप्त, गंभीर खतरे, लुप्तप्राय, कमजोर आदि श्रेणियों में अंकित सभी प्राणियों और वनस्पतियों के लिए यह आवश्यक है।
* वन्यजीवों के सुरक्षित संचार के लिए संरक्षित प्रदेशों के आसपास (आंतरिक

भागों में नहीं) के रास्ते और यातायात के लिए विशेष उपाय किए जाएंगे और चौराहें (corridors) होंगे।

* शीघ्र बढ़ावे के परिणाम हेतू लगायी गयी प्रजातियों और विदेशी प्रजातियों को कालबद्ध कार्यक्रमोंद्वारा नष्ट किया जाएगा।
* घास वाले प्रदेशों और वहाँ की प्राणियों और वनस्पतियों को स्वतंत्र पारिस्थितिकी तंत्र मानकर उनके संवर्धन हेतु सभी मार्गों का सहारा लिया जाएगा।
* आर्द्रभूमियों के संरक्षण के 2010 के नियम अक्षुण्ण रखकर उस हिसाब से आर्द्रभूमियों का संरक्षण किया जाएगा। 2017 की नियमावली को रद्द किया जाएगा।

नीतिगत स्तर पर विधायी उपाय

* सभी निर्वाचित उम्मीदवारों लिए पर्यावरणीय प्रशिक्षण कार्यशालाओं को अनिवार्य किया जाना चाहिए।
* निर्वाचित उम्मीदवार अगले पाँच सालों में अपने निर्वाचन-क्षेत्रों में किए जाने वाले पर्यावरणीय सुधारों को निश्चित करेंगे। इस मामले में उनके कार्यों का प्रतिवेदन 5 सालों में कम-से-कम तीन बार प्रकाशित किया जाएगा। यह परीक्षण विशेषज्ञों की स्वतंत्र समिति द्वारा किया जाएगा।
* नदी-जोड़ परियोजना, सागरमाला परियोजना, चारधाम महामार्ग और अंडमान-निकोबार द्वीपों में पर्यटन-केन्द्रित अंधा विकास रद्द किया जाएगा।
* पर्यावरण और वन मंत्रालय का वर्गीकरण जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, वन एवं वन्यजीव संवर्धन मंत्रालय और संसाधन प्राकृतिक मंत्रालय ऐसे तीन स्वतंत्र मंत्रालयों में करने का समय आ चुका है, ऐसा इंडिया ग्रीन्स पार्टी का स्पष्ट विचार है।
* अर्थात प्रकृति-पर्यावरण के लिए अन्य मंत्रलयी कार्यों में समन्वय बैठाने हेतु एक आंतरिक पर्यावरण विभाग होना आवश्यक है- इनमें खनन मंत्रालय, आदिवासी कल्याण, जल, ऊर्जा एवं अन्य कुछ मंत्रालयों का समावेश हो सकता है।

न्याय प्रणाली से संबन्धित मुद्दे

* पर्यावरणीय प्रशासन और अधिक अच्छा होने के लिए सभी संबन्धित मंत्रालयों, खंडपीठों, विधान मंडलों को उनके स्वतंत्र न्यायालय और संवैधानिक अधिकार दिए जाएंगे। 2014–2019 की अवधि में सरकार द्वारा किए गए परिवर्तन निरंक समझे जाएंगे।
* वन्य प्राणियों से संबंधित गुनाहों के लिए दिया जाने वाला कारावास, जुर्माने की राशि में वर्तमान से करीब दुगुनी कर दी जाएगी।
* राष्ट्रीय हरित अधिकरण का विस्तार कर **प्रत्येक राज्य** में एक खंडपीठ की स्थापना होगी। इस खंडपीठ के फैसलों को केवल सर्वोच्च न्यायालय में ही चुनौती दी जा सकेगी। समितियों की स्थापना कर पलायन न कर इस खंडपीठ के सामने खटलों का प्रत्यक्ष निराकरण होगा ।
* CAMPA (क्षतिपूर्ति वनीकरण प्रबंधन और नियोजन अधिकरण) को रद्द किया जाएगा। उद्योगों को मंजूरी देते समय सावधानी बरती जाएगी और आवश्यक प्रक्रिया पूर्ण किए बिना वन भूमि का रूपान्तरण अन्य कामों के लिए करने का प्रश्न उठता ही नहीं है। इसके लिए CAMPA जैसी प्रणाली का स्थान गैरलागू हो जाएगा।
* न्याय प्रणाली अथवा मंत्रालय द्वारा निर्देशित की गई जबाबदारियों और नियम लागू करने में असफल रहने पर राज्यों को केंद्र से मिलने वाली निधि में कपात करने जैसे दंडों का उन्हें सामना करना पड़ेगा। उनके द्वारा अपूर्ण कामों के सजा के स्वरूप इन राज्यों को केंद्र सरकार को दुगुना दंड देना होगा ।

जलवायु परिवर्तन

* देश की बिजली की असली आवश्यकता का पता लगाया जाएगा। दिन और रात में खेले जाने वाले क्रिकेट मैचों जैसे उपक्रमोंमें होने वाले बिजली का अपव्यय सहन नहीं किया जाएगा। अत्यावश्यक उपयोग पर आधारित भूटान के प्रतिरूप का उदाहरण सामने रख कर कुल बिजली उपयोग की पद्धति निश्चित की जाएगी। इससे देश की बिजली आवश्यकता की भूख कम होगी और उस हिसाब से उत्पादनों के उद्देश निश्चित किए जाएंगे। इसके बाद खनिज तेल के अतिरिक्त इंधनों के अन्य स्रोतों की ओर जाना संभव होगा ।

* बड़ी जल विद्युत परियोजनाओं को भाजपा सरकार द्वारा दिए गए अक्षय दर्जे के कारण महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्रों में और अधिवासों में इन परियोजनाओं का सहज हस्तक्षेप हो रहा है । ऐसा दर्जा रद्द कर दिया जाएगा ।
* कोयला कर केवल पर्यावरण रक्षण हेतु अथवा उसकी योजनाओं के उपायों हेतु अत्यावश्यक तरीके से उपयोग में लाया जाएगा।
* पश्चिमी घाट के संदर्भ में गाडगील समिति रिपोर्ट को पूरी तरह से मूल रूप में ही लागू किया जाएगा। पूर्वी घाट के लिए भी ऐसी ही समिति की स्थापना की जाएगी।
* तटीय क्षेत्रों के सीआरझेड कानून में 2019 में किए गए परिवर्तनों को पूर्णतः रद्द किया जाएगा।
* जलवायु परिवर्तन की समस्या का सामना करने के उद्देश्य से उत्सर्जन रोकने के लिए 2015 के पेरिस समझौते में निश्चित प्रत्येक देश का राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (nationally determined contributions) प्रत्यक्ष रूप से लागू किया जाएगा।
* जलवायु परिवर्तन से खाद्य सुरक्षा का मुद्दा तुरंत जोड़ कर, पारंपारिक भारतीय और प्रतिरोधी प्रजातियों के विषय में अनुसंधान किया जाएगा और उस हिसाब से फसल उगाने के तरीकों को बदला जाएगा।

•••

इंडिया ग्रीन्स की प्रस्तावना

हम, भारत और पृथ्वी के नागरिक तथा इंडिया ग्रीन्स के सदस्य के रूप में कानून और समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक सिद्धांतों के अंतर्गत स्थापित भारत के संविधान के प्रति निष्ठा रखते हैं। हम भारत की संप्रुभता, एकता और अखंडता को बनाए रखने की दिशा में प्रयत्नशील रहेंगे।

हमारा यह बोध अटूट है कि हम पृथ्वी की चेतनता, विविधता और सुंदरता पर निर्भर हैं और यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम इन्हें न सिर्फ अक्षुण्ण रखें बल्कि और भी बेहतर रूप में नई पीढ़ी को सौंपें।

हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि मानव द्वारा उत्पादन और उपभोग के प्रबल रुझान आर्थिक विकास की हठधर्मिता पर आधारित हैं। ऐसा विकास, जिसे मानव किसी भी कीमत पर करने पर आमादा है, पृथ्वी की ग्राह्य क्षमता पर ध्यान दिए बगैर प्राकृतिक संसाधनों का अत्याधिक और अनाप-शनाप उपयोग पर्यावरण को भारी नुकसान पहुंचा रहा है और बड़ी संख्या में प्रजातियां लुप्त होने लगी हैं।

हम स्वीकार करते हैं कि अन्याय, जातिवाद, गरीबी, अनविज्ञता, भ्रष्टाचार, हिंसा, सशस्त्र संघर्ष और कम समय में अधिक लाभ जैंसी प्रवृत्तियों के कारण मानव व्यापक कष्टों का सामना कर रहा है।

हम स्वीकार करते हैं कि विकसित देशों ने अपने आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्य प्राप्ति की भाग-भाग से पर्यावरण और मानवीय सन्मान को नुकसान पहुंचाया है।

हम ऐसा समझते हैं कि कई देशों में सदियों के उपनिवेशवाद और शोषण ने लोगों की गरीब बनाया और इस परिस्थिती के चलते अमीर देशों ने इन्हीं गरीबों के ऊपर पारिस्थितिक देनदारी थोपी है।

हम अमीर और गरीब के बीज की खाई को समाप्त करने और सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक जीवन से जुड़े हर क्षेत्र में नागरिकता आधारीत समान अधिकारों के लिए प्रतिबद्ध हैं।

हम मानते हैं कि महिला और पुरुष के बीज समता के बिना वास्तविक लोकतंत्र नहीं लाया जा सकता।

हमें मानवता के सम्मान और सांस्कृतिक मूल्यों की विरासत की फिक़्र है।

हम आदिम जातियों के अधिकारों और साझा विरासत में उनके योगदान को मान्यता देते हैं। साथ ही, सभी अल्पसंख्यकों और वंचित लोगों के धार्मिक, आर्थिक व सांस्कृतिक जीवन से संबद्ध अधिकारों को मान्यता देते हैं।

हम इस बात के प्रति आश्वस्त हैं कि हैं कि प्रतिस्पर्धा की बजाय सहयोग से ही पोषाहार, आरामदेह आश्रय, स्वास्थ, शिक्षा, उचित श्रम मूल्य, स्वतंत्र अभिव्यक्ति, शुद्ध हवा, पेयजय और स्वच्छ प्राकृतिक वातावरण जैसे मानवाधिकारों गारंटी सुनिश्चित की जा सकती है।

हमारी मान्यता है कि पर्यावरण दो देशों के बीच कायम सीमा को नहीं मानता।

हम पार्टी की विचारधारा, प्रस्तावना, सिद्धांत, नीति और ग्लोबल ग्रीन्स चार्टर का निर्माण करते हैं।

हम लोगों के नजरिये, मूल्यों और उत्पादन व रहन-सहन में मूलभूत परिवर्तन लाने पर जोर देते हैं।

हम घोषणा करते हैं कि नई सहस्राब्दि हमें वह पारिभाषिक बिन्दु उपलब्ध करा सकेगी जहां से इस कायापालट की शुरुआत होगी।

हम स्थिरता के उस व्यापक विचार को आगे बढ़ाने का संकल्प लेते हैं जो कि-

1. जैव विविधता और जीवन रक्षण के विशिष्ट सरोकारों से जुड़ी पारिस्थितीक प्रणाली की अक्षुण्णता को बहाल और संरक्षित करे।
2. सभी पारिस्थितसतिक, सामाजिक और आर्थिक प्रक्रियाओं के अंतसर्बबंधों को मान्यता देती हो।
3. लोगों के निजी हित और सामूहिचक अच्छाई के बीच संतुलन कायम कर सके।
4. स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व के बीच सामंजस्य स्थापित कर सके।
5. अनेकता में एकता का स्वागत कर सके।
6. अल्पावधि लक्ष्यों को दीर्घावधि लक्ष्यों के साथ जोड़ सके।
7. यह सुनिश्चत कर सके कि प्राकृतिक और सांस्कृतिक हितलाभों पर भावी पीढ़ियों का वर्तमान पीढ़ी जितना ही अधिकार रहे।

हर एक-दूसरे के प्रति, वृहत्तर सामुदायिक जीवन के प्रति और भावी पीढ़ियों के प्रति अपनी जिम्मेदारी का वचन देते हैं।

हम इन परस्पर सिद्धांतों को लागू करने के लिए स्वयं को ग्रीन पार्टी और राजनीतिक आंदोलन के तौर पर प्रतिबद्ध करते हैं और इनकी पूर्ति के समर्थन में एक वैश्विक साझेदारी के लिए भी दृढ़ प्रतिज्ञ हैं।

हम सामाजिक न्याय, समान अवसर, अहिंसा, विकेन्द्रीकरण, सामुदायिक आधारित अर्थव्यवस्था, नारी अधिकार, विविधता का सन्मान, व्यक्तिगत व वैश्विक जिम्मेदारी, भविष्य पर ध्यान और स्थिरता के लिए प्रतिबद्ध हैं।

•••

भारत के पर्यावरण का पतन
2014 से 2019

भूमिका और प्रेरणा

2014 से 2019 की कालावधि में भारत ने आजतक की सबसे प्रकृति –विरोधी सरकार देखी। केंद्र सरकार की पर्यावरणविषयक विनाशकारी नीतियाँ विभिन्न वैश्विक व्यासपीठों पर और रिपोर्टों में प्रतिबिम्बित हुईं और भारत को विभिन्न स्तरों पर कड़वी निंदा झेलनी पड़ी। पर्यावरणीय कार्यों के सूचकांक में भारत नीचे जा चुका है: 180 देशों में 177 वां क्रमांक ! फिर भी वहाँ यत्किंचित भी ध्यान न देकर सरकार ने अपनी नीतियों को आगे चलाना जारी रखा। । प्रकृति–पर्यावरण के अपरिवर्तनीय नुक़सानों से विद्यमान सरकार को कोई लेना–देना नहीं है, न ही था। मताधिकार का प्रयोग कर यह प्रकृति–विरोधी सरकार बदलने का मौका लोकसभा चुनाव, 2019 के रूप में मतदाताओं को मिला है। इसके लिए पहले नागरिकों ने इस सरकारी विफलता को आंकड़ों की सहायता से समझ लेनी चाहिए्। उसी दृष्टि से यह पुस्तिका कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं, प्रतिवेदनों और सूचकांकों से परिचय कराती है। यह पतन रुके और भारत का पर्यावरण फिर से एक बार अच्छा हो जाए, इसके लिए ये सभी विवरण गतिमान संतुलन नामक मासिक पत्रिका के माध्यम से मैं जनता के सामने रखूँ, ऐसा अनुरोध उसके संपादक श्री दिलीप कुलकर्णी जी ने मुझसे किया। उसका आदर करते हुए 12 लेखों की एक शृंखला मैंने ग.सं. में लिखी।

अप्रैल –मई 2019 में होनेवाले सार्वजनिक चुनाव के पहले यह पूरी जानकारी लोगो तक पहुंचे, इस हेतु से इसे पुस्तिका के रूप में प्रकाशित करने का मानस था। विद्यमान और पहले की सरकारों ने प्रकृति–पर्यावरण का अक्षम्य–कुछ मामलों में अपरिवर्तनीय – नुकसानों को लोगों के सामने रखना ही इसका मुख्य उद्देश्य है।

भारत के पहले हरित राजनैतिक दल के रूप में इंडिया ग्रीन पार्टी अब कार्यरत हो रहा है। उसके सामने की चुनौती कितनी बड़ी है, इसकी कल्पना आंकड़ों के माध्यम से होगी ही। यह वास्तविकता अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाने का मानस है। इसके लिए अधिक से अधिक पाठकों का सहकार्य हमें अपेक्षित है।

संतोष शिंत्रे

1. झूठी वाहवाही, सच्ची निंदा

वर्तमान में, प्रचलित विकास नीति के कारण होने वाला प्रकृति का अपरिवर्तनीय नुकसान और भविष्य में हमने जो उसके परिणाम भुगतने पड़ेंगे, उन्हें समझ लेना बहुत आवश्यक है। यदि आप 2017 की घटनाओं को देखेंगे तो आपको समझ में आएगा। और इन सभी 3-4 घटनाओं में एकसमान सूत्रता है, यह भी ध्यानमें आएगा।

इस पहले अध्याय में इन भिन्न घटनाओं की, सूचकांकों से प्राथमिक परिचय कर लेंगे। और फिर एक-एक घटना का स्वतंत्र अध्ययन कर कुछ निष्कर्षों तक हम पहुँच सकेंगे। सबसे पहले देखेंगे विश्व बैंक ने भारत की 'कारोबार सुगमता' के संबंध में क्या तारीफ की है । और सरकार ने उसका अत्यंत बदमाशी से उपयोग किया है । यह सबसे पहले हुआ दिसंबर 2017 के आसपास। तब भारत सरकार ने अपने प्रदर्शन में सुधार कर अपना 100वां स्थान प्राप्त करने पर खुद की पीठ थपथपाई और इस तारीफ का बहुत उपयोग किया। दिसंबर 2018 में यही स्थान सुधरकर 70 वां हो गया तब तो और ही उन्मादी वातावरण तैयार किया गया। पर उसी विश्व बैंक के Diagnostic assessment of Select Environmental Challenges in India नामक 2017 के रिपोर्ट के संबंध में एक भी शब्द का उच्चारण नहीं किया। उसमें भारत के शिथिल पर्यावरणीय प्रशासन के कारण होने वाले बेशुमार नुकसान के ऊपर विश्व बैंक ने कडक निंदा कर भारत को शर्मिंदा किया है। यह हुई पहली घटना।

1992 में Union of concerned scientists नामक वैज्ञानिकों की संस्था के 1700 वैज्ञानिकों ने-जिसमें से अधिकतर नोबल पुरस्कार प्राप्त थे- समस्त मानव प्रजाति को फटकार लगाई थी। यह वार्निंग टू ह्यूमेनिटी के नाम से प्रसिद्ध है। इस फटकार को अब २५ साल पूर्ण हो चुके हैं। नवंबर-दिसंबर 2017 में उन्होने सेकंड वार्निंग जारी की। उनके द्वारा उस समय दिए गए खतरों के इशारों में ओज़ोन के स्तर के स्थिरीकरण के अलावा और किसी भी विषय पर मानव जाति ने ध्यान नहीं दिया। उसके क्या क्या परिणाम हुए ये 'सेकंड वार्निंग' में विस्तार से बताए गए हैं। परिस्थिति और भी भयानक होती जा रही है यह तो निश्चित है। यह वह दूसरी घटना है जो हम देखेंगे।

और तीसरी घटना इस प्रकार है। दावोस शहर में जिस वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम के परिषद में प्रधानमंत्री मोदीजी ने भीख मांगी कि 'भारत में आकर कोई भी उद्योग शुरू करें', उसी फोरम ने परिषद के बाद कुछ ही दिनों में येल विश्वविद्यालय और कोलंबिया विश्वविद्यालय की सहायता से तैयार किए गए बीसवें वैश्विक पर्यावरणीय

प्रदर्शन सूचकांक में भारत बिलकुल नीचे आ गया था। 180 देशों में अपना स्थान नीचे से चौथा यानी कि 177वां था। अध्ययन की यह तीसरी घटना। पर्यावरणीय सुशासन क्यों और कैसा हो, अभी वह कैसा है, यह सब कुछ हमें उसी से समझ में आएगा। और फिर हम अपने शासकों का चुनाव बेहतर तरीके से करेंगे।

सबसे पहले विश्व बैंक की तारीफ़ें और फिर निंदा देखते हैं। विश्व बैंक ने भारत की कारोबार सुगमता (ease of doing business) में सुधार होने के प्रमाण पत्र दिए हैं। 130 वें स्थान से भारत 2019 में 70 वें स्थान पर आगया है। इसमें और भी सुधार होंगे ऐसा स्वयं प्रधान सेवक ने कहा है। विश्व बैंक का यह मूल मापदंड क्या है, उसका स्वरूप, उसके उद्देश्य क्या हैं और सरकार ने उसका उपयोग अपनी विनाशकारी विकास नीतियों को आगे बाने के लिए कैसे चालाकी से किया, यह यदि हमने ध्यान से देखा तो इसके पीछे का सत्य हमें पता चलेगा। वैसे तो विश्व बैंक का कारोबार सुगमता नामक मापदंड 2002 में लाया गया। विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में, पार्यावरणिक नियमन को कार्यक्षम रखकर, स्वस्थ प्रतियोगिता के लिए प्रोत्साहन देने के साथ-साथ उसको मापने के लिए कुछ मापदण्डों को निर्धारित करने का यह प्रयत्न था। 1970 से वैश्वीकरण के अंतर्गत जैसे-जैसे विभिन्न देश आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण की ओर चलने लगे, वैसे -वैसे वहाँ अधिक व्यवसाय होने लगे। ऐसे में उन व्यवसायों को अच्छे से नियंत्रित, नियमित करने के लिए ढांचा देने का यह एक प्रयत्न था और है। इस मापदंड का एक महत्वपूर्ण भाग है पार्यावरणिक नियमन की नियमावली। और उसी को पूरी तरह से उखाड़कर सरकार 'जीतं मया' की माला जप रही है। पर्यावरणीय नियमन निकालने पर सुगमता बढ़ती है ऐसा इसमें नहीं कहा गया है। यह अर्थ सिर्फ हमारी सरकार ने ही लगाया है। विश्व बैंक का कारोबार सुगमता यह मापदंड अधिकतर छोटे, मध्यम और देश के अंतर्गत उद्योग कितने सुगमता से चल रहे हैं, यह देखता है। इसमें हमारा क्रमांक बहुत नीचे है- 156वां - और यह तथ्य हमारी मायबाप सरकार बड़ी ही सुगमता से हमसे छुपा रही है। और दूसरी ओर पर्यावरण के नियम उद्योगों के विकास के लिए किस प्रकार से बाधा है, यह बताते हैं । इस साधन का उपयोग कर छोटे, मध्यम और नए उद्योगों को जिस भ्रष्टाचार का सामना करना पड़ता है, उसे खतम करना आवश्यक था। उसके बजाय इस साधन का उपयोग उन्होने बहुराष्ट्रीय, विशालकाय कंपनियों को भारत के प्राकृतिक संसाधनों को कैसे हड़पा जाए, इस सुगमता के लिए किया। अमूल्य जैविक संपदा से भरे जंगल खाली करने की अनुमति केवल एक 'क्लिक' पर लाकर खड़ी कर दी। बन्दरगाहों, विद्युत परियोजनाओं, समुद्र तटों से लगी परियोजनाओं, इस्पात परियोजनाएं, लौह खनिजों का खनन, आदि सभी

परियोजनाओं के लिए इन दैत्याकार कंपनियों ने भारत के प्रकृति की बेपरवाह लूट शुरू की है।

ऐसी परियोजनाओं का पर्यावरणीय आघात बहुत बड़ा होता है। इसका सावधानी से अध्ययन करना पड़ता है। और इसीलिए इसमें समय लगना स्वाभाविक है। 'आवेदन किया नहीं कि मंजूरी मिल गई' प्रकार की प्रक्रिया ऐसे उदाहरणों में बहुत बड़े और अपरिवर्तनीय विनाश का कारण बन सकती है। कितनी भी विनाशकारी परियोजना हो, उसे मंजूरी देने की परंपरा सरकार ने शुरू कर दी है। किसी भी प्रकार के नियमों का उल्लंघन कानून की कक्षा में लाया ही नहीं जाता । पर्यावरणीय विनाश के अतिरिक्त ये कंपनियाँ जो कर-चोरी, मानवीय अधिकारों का उल्लंघन जैसे अपराध भी अनायास कर रही हैं, उनकी तरफ भी अनभिज्ञता दिखाई जा रही है। पर्यावरणीय प्रभावों का आंकलन, जन-सुनवाई जैसी 'बाधाएँ' दूर कर, परियोजना के सिर्फ फायदे बताए जा रहे हैं। और जब ऐसे अपराधों के लिए इन कंपनियों को केवल न्यायालय में ही जवाब मांगा जा सकता है। लौह अयस्को के मामले मैन सरकार द्वार नियुक्त एम.बी.शाह समिति अथवा कोलगेट का फैसला इसके उदाहरण हैं । वहाँ भी हरित अधिकरण के अधिकारों पर कैंची चलाने का काम चालू है। इस सभी के बीच में मूल संसाधनों का नाश होता जा रहा है, यह विशेष है।

विश्व बैंक की तारीफ़ों से यदि अपनी पीठ थपथपानी हो तो उसी बैंक के Diagnostic assessment of Select Environmental Challenges in India नामक रिपोर्ट की निंदा भी सरकार को उसी पीठ पर झेलनी होगी। जिस जीडीपी के गुणगान विद्यमान सरकार अखंड गाती रहती है, उसी भारत की जीडीपी में पर्यावरणीय हानि और नुकसान के कारण प्रतिवर्ष जीडीपी के 6% यानी करीब 80 अरब रुपए का नुकसान हो रहा है। यह उसी रिपोर्ट में बताया गया है। इसमें केवल वायु प्रदूषण के कारण 3% नुकसान हो रहा है। भारत में होनेवाले बालमृत्युओं में 23% मृत्युओं के पीछे पर्यावरणीय कारण हैं। वायु प्रदूषण, कृषि भूमि, चारागाहों और जंगलों की होने वाली तबाही, जलापूर्ति और संबन्धित अस्वच्छता भारत के सबसे बड़ी पर्यावरणीय समस्याएँ इन नुक़सानों के लिए उत्तरदायी हैं, ऐसा इस रिपोर्ट में कहा गया है। इस रिपोर्ट के बारे में किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा है। किसी एक मापदंड को आगे कर खुद की पीठ थपथपाना कितना सहज है न !

•••

2. तथ्य दिखाने वाले कुछ आंकड़ें

वर्ष 1992 में union of concerned scientists नामक 1700 वैज्ञानिकों की संस्था (जिसमें अधिकांश नोबल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक हैं) ने समस्त मानव जाति को एक फटकार लगाई थी। 'वार्निंग टू ह्यूमानिटी' के नाम से यह प्रसिद्ध है। इस फटकार को अब 25 साल हो चुके हैं। वर्ष 2017 में उन्होने दूसरी चेतावनी दी। उनके द्वारा उस समय दिए गए खतरों के इशारों में ओज़ोन के स्तर के स्थिरीकरण के अलावा और किसी भी विषय पर मानव जाति ने ध्यान नहीं दिया। उसके क्या क्या परिणाम हुए ये सेकंड वार्निंग में विस्तार से बताए गए हैं। परिस्थिति और भी भयानक होती जा रही है यह तो निश्चित है। साधारणतः ऐसे इशारों को विवादास्पद और डरावना लेखन समझकर उस को गंभीरता से नहीं लिया गया, यह वास्तविकता है। आज की जो भयानक परिस्थिति है, वह इसी कारण से हम पर आई है। यह वस्तुतः क्या है यह हमें दूसरी वार्निंग आँकड़ों के साथ स्पष्ट करती है । नीति विधायक, सम्पूर्ण प्रणाली और आम नागरिकों के लिए एक कार्य की योजना सामने रखती है। जब हम इसके आंकड़ें देखते हैं तो यह शीघ्र ही समझ में आजाता है कि विद्यमान सरकार ने कारोबार सुगमता के नाम पर कौन-सी अक्षम्य, गंभीर धोखाघड़ी हमारे साथ की है। इस सब प्रक्रिया में हमारे संसाधनों का खात्मा हो रहा है, यह नहीं भूलना चाहिए। यहाँ हम फिर से 1700 वैज्ञानिकों द्वारा दी गई चेतावनी की ओर आते हैं। हमारे मूल संसाधन, उनसे मिलने वाले फायदे, सेवाएँ यदि नहीं होंगी तो उनके उत्पादन की लागत यदि खर्च में शामिल की जाए तो बड़े-बड़े उद्योग नुकसान में चले जाएंगे, फिर हाथ में मंजूरियों के दस्तावेज़ होने के क्या फ़ायदे?

1000 घनमीटर में प्रति व्यक्ति मीठे पानी की मूल स्रोतों से उपलब्धता

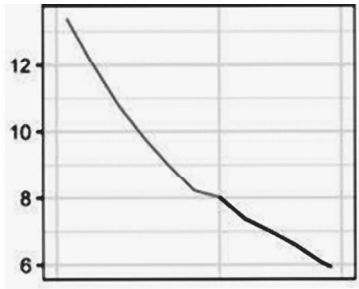

आकृति 1

और यह चेतावनी केवल डराने वाला शब्दों की खेल नहीं है, उसके साथ स्वच्छ प्रकाश में जैसे प्रतिबिंब दिखता है वैसे तथ्यदर्शक आंकड़ें हैं। (संलग्न आकृतियाँ देखें)

प्रतिवर्ष पुनर्स्थापित
मत्स्य–ग्रहण (मेट्रिक टन में)

आकृति 2

सम्पूर्ण मृत, जीवनरहित प्रदेशों
की बढ़ती संख्या

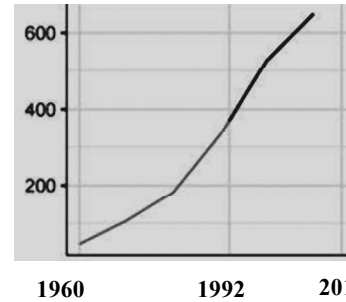

आकृति 3

कुल वन आच्छादन
(अरब हेक्टर में)

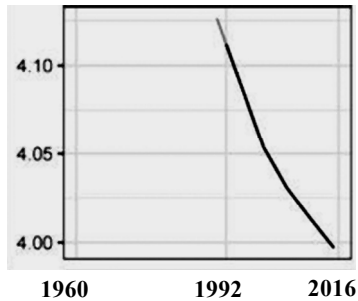

आकृति 4

१९७० की तुलना में रीढ़ की
हड्डीवाले प्राणियों की
विपुलता (प्रतिशत)

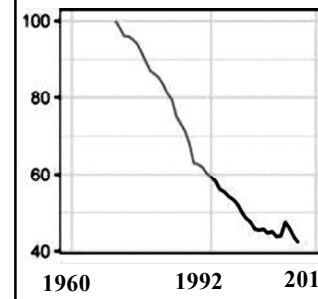

आकृति 5

इसमें मीठे पानी के जैविक स्रोत प्रति व्यक्ति 1000 घन मीटर के गुणकों में कम होते दिखाई दे रहे हैं आकृति 1 में; वहीं आकृति 2 में पुनर्स्थापित मछली पकड़ने के कार्य से मिलने वाली मछली 1990 के मध्य से कम होती जा रही है। किन्तु, मानव द्वारा मछली पकड़ने का कार्य बढ़ता ही जा रहा है। ऐसे अनियंत्रित कुरेदने के कारण मछलियाँ ही मिलना बंद हो गई हैं । पूरी तरह मृत यानी की जैविक संपदा, प्रजातियों की झलक भी न हों, ऐसे प्रदेशों की संख्या बढ़ती जा रही है। (आकृति 3) कितने

प्रतिवर्ष कार्बन उत्सर्जन (CO_2 गिगाटन में)

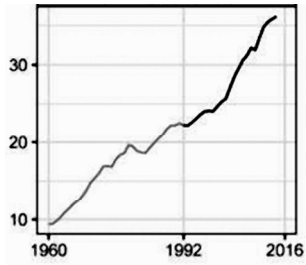

आकृति 6

तापमान में होने वाले परिवर्तन (0 से.)

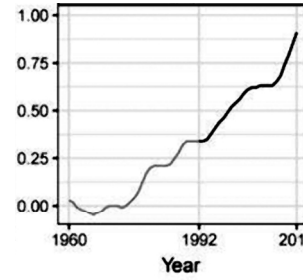

आकृति 7

जनसंख्या

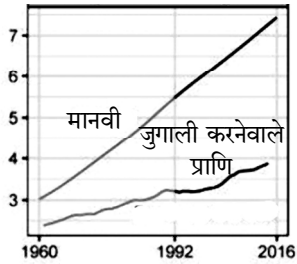

आकृति 8

CFC-11 सममूल्य ओझोन की परत को घातक पदार्थों का प्रमाण (मेट्रिक टन में)

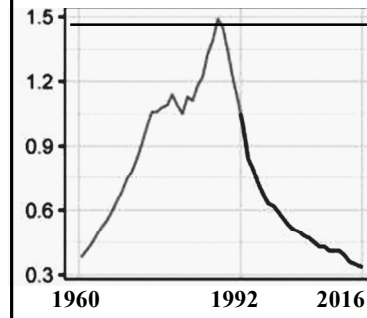

आकृति 9

अब्ज हेक्टर भूमि के वन नष्ट होते जा रहे हैं, यह आकृति 4 से स्पष्ट है। रीढ़ की हड्डी वाले जानवरों के प्रमाण में 1970 की तुलना में होने वाली कमी आकृति 5 में स्पष्ट है। 1970 से 2012 की इस अवधि में ऐसे प्राणियों की संख्या 58% तक घट गई। इसमें मीठे पानी के 81%, समुद्री जल के 36% और भूमि पर के प्राणियों में 35% की कमी आई है। कार्बन का उत्सर्जन हर साल कितने गिगाटन और कैसे बढ़ता जा रहा है, यह आकृति 6 में दिखाई दे रहा है। हर साल तापमान कितने अंश सेल्सियस

बढ़ रहा है, यह आकृति 7 में दिखाया गया है।

आकृति 8 में मानव की और जुगाली करनेवाले प्राणियों की सतत बढने वाली जनसंख्या आप देख सकते हैं। प्राकृतिक संसाधनों पर सर्वाधिक बोझ डालने वाले ये दो प्रकार के प्राणी। इस विषय पर कोई भी प्रभावी उपाय न कर प्राकृतिक संपदा को मुफ्त के भंडारे की तरह हम बांटते चले जा रहे हैं। केवल एक ही आशापूर्ण घटना हुई है और वह है ओझोन की परत के लिए हानिकारक पदार्थों में मानवीय प्रयत्नों से हुई कमी। सीएफ़सी-11 जैसे पदार्थों की प्रति वर्ष प्रमाण में कमी मेट्रिक टन में आकृति 9 में दिखाई दे रही है। इसका अर्थ यह है कि मानव ऐसे परिवर्तन ला सकता है!

•••

3. वैश्विक पर्यावरण प्रदर्शन सूचकांक के घटक और उपघटक

पिछले दो अध्यायों में हमने विश्व बैंक की रिपोर्ट की तारीफ़ें और मशहूर वैज्ञानिकों द्वारा दी गई वार्निंग टू ह्यूमेनिटी के बारे में जाना। इस अध्याय में देखेंगे कि क्यों भारत वैश्विक पर्यावरणीय सूचकांक में नीचे से चौथे क्रमांक पर फेंक दिया गया (180 देशों में 177वां क्रमांक) । और उस सूचकांक के घटक और विभिन्न उपघटक भी। पहले, कुछ प्राथमिक जानकारी हम देख लेते हैं। येल विश्वविद्यालय, कोलम्बिया विश्वविद्यालय और विश्व आर्थिक मंच (वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम), ये तीन विश्वमान्य संस्थाएँ यह सूचकांक पिछले बीस सालों से प्रकाशित कर रही हैं। इसे तैयार करते समय इसकी अचूकता के लिए और उसे अधिक वैज्ञानिक, सटीक बनाने के लिए कुछ मापदण्डों का प्रयोग किया गया है। उनके द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले इन मापदण्डों और उनकी विविधता को जब आप देखेंगे तो आश्चर्यचकित रह जाएंगे। किसी भी प्रकार की गलती, गफलत या गबन के लिए इन सटीक मापदण्डों ने सुई के नोंक इतनी भी जगह नहीं रखी है। इन सूचकांकों के घटकों के निर्माण में सांख्यिकी के अत्यंत कठिन कसौटियों से निष्कर्षों तक पहुँचने के लिए किसी प्रदेश में कितने नमूने लाना आवश्यक है, इस मामले में भी बहुत कडक नियमावली है, इस विशाल जानकारी के भंवर में न फँसकर आम पाठकों को इतना भी बताना काफी है। कहने का तात्पर्य यह है कि इसमें दिए गए आंकड़ें, सांख्यिकीय प्रक्रिया, किए गए निरीक्षणों में गलतियाँ होने की संभावना न के बराबर है। और बीसवें वर्ष में, उसके निर्माण की प्रक्रिया अच्छे से परख कर अचूक होती रही है। फिर भी संप्रति पर्यावरण विभाग का कार्य संभालने वाले राज्यमंत्री डॉ. हर्षवर्धन ने ऐसे सूचकांक आते-जाते रहते हैं। ऐसा कहते हुए बे सिर पैर की प्रतिक्रिया व्यक्त की है। अर्थात हमेशा की तरह बोलने वाला कोई और है।

***

इस सूचकांक के दो प्रमुख भाग हैं।

1. पर्यावरण -आधारित स्वास्थ्य (Environment related health) : यह बताते हुए अत्यंत खेद हो रहा है कि इसमें भारत सबसे आखिरी यानी कि 180वें

स्थान पर है। अगले कुछ लेखांकों के माध्यम से हम इस भाग की और उसके उपघटकों की वर्तमान स्थिति जान लेंगे। ये तीन उपघटक हैं – वायु की गुणवत्ता (air quality), पानी की शुद्धता और स्वच्छता (water quality and sanitation) और पानी में भारी धातुओं का प्रमाण (Heavy metals). इन तीनों उपघटकों में हमारी उपलब्धियां (!) हैं क्रमशः 178, 140 और 175. (180 देशों में)

2. पारिस्थितिकी तंत्र की क्षमता और उत्पादकता (Ecosystem Vitality):

इसमें फिर से सात उप घटक हैं। तत्संबंधी हमारे स्थान कोष्ठक में दिए गए हैं। पारिस्थितिकी तंत्र की उत्पादकता (140), विभिन्न अधिवास एवं जैव विविधता (139), जंगलों की परिस्थिति (68), मत्स्य-ग्रहण की उत्पादकता (53) (अंधों में काना राजा !), जलवायु और ऊर्जा (120), प्रदूषण (131), जल स्त्रोतों की परिस्थिति (107) एवं कृषि (125)। दोनों भागों के दस उपघटकों में, कुल मिलाकर 24 मापदण्डों में, हम केवल 2 क्षेत्रों में ही 100 के अंदर हैं।

•••

4. वायु की गुणवत्ता

सबसे पहले देखते हैं पहले भाग, यानी की पर्यावरण आधारित स्वास्थ्य, के तीन उपघटक । उनमें पहला है वायु की गुणवत्ता । विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इस गुणवत्ता में गिरावट के दो प्रमुख कारण बताएं हैं : घर के अंदर का प्रदूषण और घर के बाहर का प्रदूषण । प्राकृतिक अथवा मानव-जन्य घटक प्रदूषकों को वायु में छोड़ना इस दर्द के पीछे का कारण है। प्रस्तुत सूचकांक में वायु की गुणवत्ता मापने के लिए तीन घटक ग्राह्य हैं । पहला है घरों में ठोस ईंधनों का उपयोग। दूसरा है अति खतरनाक पीएम2.5 नामक कणों को किसी देश के नागरिक किस प्रमाण में पचाते हैं (Average exposure) और पीएम2.5 कणों के स्वीकार्य स्तर से कितना अधिक भार उन्हें सहन करना पड़ रहा है। (PM 2.5 Exceedance)। इन महाभयंकर PM2.5 कणों की सीधे मानव के फेफड़ों में घुसानी की क्षमता के कारण हृदय, धमनियों और साँस की बीमारियाँ बड़े पैमाने पर फैलाने लगती हैं। विश्व में हर साल करीब 5 करोड़ लोग इसके कारण असमय मृत्यु के शिकार हो जाते हैं। इन तीनों घटकों को मापने की कौनसी पद्धति का उपयोग किया गया है, यह भी विस्तृत रूप में दिया हुआ है। (हम भी संक्षेप में देखेंगे) ठोस ईंधनों का घरेलू उपयोग एवं उससे होने वाले खतरों (आंशिक दहन के कारण) को यह सूचकांक इस प्रकार से गिनता है -, एक लाख नागरिकों में, आयु के प्रमाणित स्वरूपों में, कितने नागरिकों की इस खतरे से सामंजस्य साधने हेतु लगाने वाले वर्षों के कारण औसत जीवन प्रत्याशा में कमी होने को गिना जाता है।

पीएम 2.5 कणों को किसी प्रदेश के नागरिक औसतन कितना पचा रहे हैं - या सही अर्थों में सामना कर रहे हैं- यह है दूसरा घटक। साधारण रूप से किसी जलवायु में जनसंख्या में पाई जाने वाली पीएम2.5 के कणों का प्रहार कितने समय तक उस देश की जनता सामना करती है, इस पर यह घटक तय होता है। और तीसरा घटक है पीएम2.5 कणों के स्वीकार्य प्रमाण से कितना अधिक भार उस देश की जनता को सहन करना पड़ रहा है। WHO के प्रमाणानुसार प्रति घन मीटर 10, 15, 25 और 35 मायक्रोन के मानकों को सुरक्षित से अति खतरनाक ठहराया गया है। किसी देश में ये चारों आंकड़ों के कुछ स्थानों के पीएम2.5 कणों के बिखराव का और वहाँ की जनसंख्या के औसत बिखराव के आंकड़ें यह घटक संख्यायित करता है। एक माइक्रोन का अर्थ है एक मिलीमीटर का हजारवाँ भाग। केवल 2.5 माइक्रोन परिधि

वाले ये पीएम2.5 कण के कारण, यदि सिर्फ भारत की बात करनी हो तो, हर साल 16,40,113 लोगों की असमय मृत्यु होती है, ऐसा Institute of Health metrics and evaluation के 2017 की आंकड़ें बताते हैं। पर क्या कर सकते हैं? महाशक्ति बनने की प्रक्रिया में यह सब तो होगा ही, है न? आधे जले हुए ठोस ईंधन से (लकड़ी, फसलों की लटट्ठियाँ, कोयला, कंडे) स्वीकार्य स्तर से 100 गुना अधिक पीएम2.5 का उत्पादन होता है। गुजरात के आणंद जिले में वायु में तरंगनेवाले सूक्ष्मकणों का उत्सर्जन और साथ ही लकड़ी के धुएँ में से निकलने वाले बेंजो-पाइरिन को गिना था । स्वीकार्य स्तर 120 से 150 मिलीग्राम है पर यहाँ की वायु में इसका औसत था 1110 से 56000 मिलीग्राम।

•••

5. पानी की शुद्धता और स्वच्छता

वैश्विक पर्यावरणीय सूचकांकों के पहले भाग के पर्यावरण आधारित 'स्वास्थ्य' के उपविभागों की हम जानकारी ले रहे हैं। पिछले अध्याय में 'वायु की गुणवत्ता' यह पहला उपविभाग हमने देखा। इस अध्याय में पानी की शुद्धता और स्वच्छता, इस दूसरे उपविभाग पर डालेंगे। इसमें हमारा क्रमांक 180 देशों में से 140वें स्थान पर आगया है। इस उपघटक का मूल्यांकन पर्यावरण सूचकांक में २ मापदंडों के आधार पर किया जाता है-

1. पेयजल की उपलब्धता और उसकी गुणवत्ता; और
2. जल-आपूर्ति के विभिन्न अवस्थाओं के दौरान वे मानक जिनका पालन किया गया।

पेय जल की कमी अथवा अभाव के कारण होने वाले स्वास्थ्य विषयक खतरों का सामना देश की जनसंख्या में कितने लोग सामना कर रहे हैं, यह पहला मापदंड हुआ। उसमें भी घरेलू पानी का मूल स्रोत क्या है, घरेलूस्तर पर पानी को शुद्ध करने की प्रक्रिया होती है क्या, किस प्रमाण में, पानी का जो स्रोत है, वहाँ शोधन की प्रक्रिया होती है या नहीं, इन बातों पर इस मापदंड में ध्यान दिया जाता है।

दूसरा मापदंड है : पेयजल की स्वछता, शोधन-प्रक्रिया का प्रावधान और उसके मापदंड । (Sanitation and allied Measures) ऐसी स्वच्छता का प्रावधान न होने पर अथवा पर्याप्त न होने पर देश की कुल जनसंख्या में से कितने लोग स्वास्थ्य-संबंधी जोखिमों का शिकार हो जाते हैं, इससे इसकी प्राथमिक गणना की जाती है। कौनसे प्रकार के शौचालयों का उपयोग ये जनसंख्या करती है, इस का भी बहुत बड़ा योगदान है।

अंत में, इन दोनों मापदण्डों पर सांख्यिकीय उपचार होते हैं और उन्हें एक ही घटक के आधार पर साझा रूप में प्रस्तुत किया जाता है- एक लाख की जनसंख्या में से, आयु के प्रमाणित स्वरूप में, इन दो मापदण्डों में स्थित त्रुटियों अथवा अभावों के कारण उत्पन्न जोखिमों के दुष्परिणाम भुगतने से औसत जीवन प्रत्याशा में हुई कमी । (Age standardized, disability Adjusted life years lost per 100000 persons). इन सभी के कारण जो पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक आपदाएँ आती हैं, उन्हें विस्तार से देखते हैं:

1. पर्यावरणीय आपदाएँ : केवल मानव के लिए ही नहीं तो पूरे पारिस्थितिकी तंत्र अबाधित रहने के लिए पानी की न्यूनतम गुणवत्ता आवश्यक है। पारिस्थितिकी तंत्र पर जलप्रदूषण के विभिन्न दुष्परिणाम बड़े पैमाने पर होते हैं। इनमें जहरीली वस्तुओं के बढ़ते स्तर, सुपोषण, क्षारीयकरण, आदि सभी का समावेश होता है। साबुनों, सौंदर्य प्रसाधनों, औषधों, प्रतिजीवों जैसे विभिन्न पदार्थ जल के स्रोतों में छोड़ कर उन्हें प्रदूषित करता है। जलीय पारिस्थितिकी तंत्रों का इसके कारण बहुत नुकसान होता है। (संयुक्त राष्ट्र, 'पानी', 2014)। खेत से बहने वाला अतिरिक्त पानी (Agricultural run off), मानवीय मल-पानी और औद्योगिक प्रदूषणकारी रसायनों का एकत्रित परिणाम से पानी में पोषण के घटकों का प्रमाण बढ़ जाता है। इसे ही सुपोषण या Eutrophication कहते हैं। ऐसे बढ़े हुए पोषक तत्व (Nutrients) पानी की खाद्य शृंखलाओं के निचले भाग के लिए बहुत हानिकारक होते हैं। उनके संतृप्त होने से पानी में स्थित ऑक्सीज़न की मात्रा कम होने लगती है या खतम हो जाती है। जलचरों की असमय मृत्यु हो जाती है। परिणामतः, जल स्रोतों से मानव को मिलने वाली पर्यावरणीय सेवाओं की गुणवत्ता कम हो जाती है और खतम भी हो जाती है। क्षारीयकरण के कारण जैव विविधता में गिरावट आती है, फसलों की उत्पादकता कम हो जाती है (शीघ्र ही, अधिक क्षार सहन करने वाली जीनांतरित क़िस्मों की मांग करने के लिए छद्म विचारक और चिंतक तैयार ही बैठे रहते हैं !)

२. सामाजिक आपदाएँ : इन दोनों घटकों की कम होती गुणवत्ता का कारण कुछ सामाजिक दुष्परिणाम भी देखने को मिल रहे हैं। विकसित और विकासशील (!) देशों में सुरक्षित पेय जल की उपलब्धता में विशाल अंतर तो है ही पर यूनिसेफ के अधिकृत आंकड़ों के अनुसार, विश्व में शहरों में रहने वाली जनसंख्या में से ९६% लोगों को शुद्ध, शोधन-प्रक्रिया किया हुआ जल उपलब्ध है पर, उसी विश्व में, गांवों में रहने वाली जनसंख्या में से 84% को ही यह उपलब्ध होता है। दूषित पेयजल और अस्वच्छ स्रोत/आपूर्ति के कारण विश्वभर में होने वाली बालमृत्यु का प्रमाण चिंताजनक है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के 2017 की रिपोर्ट के अनुसार डायरिया जैसी बीमारियों के कारण हर साल 1,21,000 से भी अधिक बालकों की मृत्यु होती है और बच्चों के कुपोषण की समस्याओं में से 50% से अधिक इसी से संबन्धित हैं । इन दो घटकों की गिरती गुणवत्ता के कारण कुछ आर्थिक हानियाँ भी होती हैं। प्रूस, यूस्टन,इत्यादि के 2008 के अनुसंधान के अनुसार अस्वच्छ, असुरक्षित पानी से संबंधित बीमारियाँ चिकित्सकीय उपचारों पर खर्चा बाते हैं। (GDP तो बढता हैं ना। और क्या चाहिए?) किंतु, विश्व में सभी को शुद्ध, स्वच्छ पानी की आपूर्ति करने का खर्च विश्व

बैक के अंदाज के अनुसार 28.4 अरब डॉलर इतना होगा। आंकड़ा बड़ा लग रहा है पर 2005 में संपूर्ण विश्व का सैनिक बलों पर खर्चा 1 लाख करोड़ डॉलर था। वहीं, अमरीका अपनी सेना पर 492 अरब डॉलर खर्च कर रही थी। इसी देश में महामार्गों के निर्माण के लिए 29 अरब डॉलर और वेफ़र्स या अन्य जंक फूड पर लोग हर साल करीब 22 अरब डॉलर खर्च करते हैं। यह पढ़ने के बाद आपको वह आंकड़ा बिलकुल अल्प लगेगा। (अधिकृत आंकड़ें) सिर्फ क्या है कि, 'यह कौन करेगा' इस प्रश्न का हल ढूँढने पर हो ही गया समझो। पानी की शुद्धता, स्वच्छता के लिए करीब तीन वर्षों में काफी देशों के बजटों में औसतन 5% की वृद्धि हुई है, ऐसा संयुक्त राष्ट्र संगठन की 2017 की रिपोर्ट बताती है। पर, वह यह भी बताते हैं कि 80% देशों के बजटों में पानी से संबंधित प्रावधान आज भी राष्ट्रीय उद्देश्य हासिल करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

भारत के लिए (एवं विश्व में अन्य कहीं भी जहां यह लागू हो) एक दुखती नस यह भी है कि महिलाओं के मासिक धर्म के दरम्यान स्वच्छता से संबंधित सुविधाओं की कमी। इसका पानी की गुणवत्ता से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संबंध है। भारतीय स्त्रियों को जननांगों से संबंधित बीमारियों में से 70% बीमारियाँ इसी के कारण होती प्रतीत होती हैं (वेनेमा, 2014)। ऐसी अस्वच्छता का परिणाम बालिकाओं की शिक्षा पर भी होता है। भारत में स्कूली लड़कियां महीने में 5 दिन विद्यालय नहीं जाती हैं। और वहाँ स्वच्छता से संबंधित सुविधाओं का अभाव होने के कारण 23% लड़कियां इस उम्र में आने के बाद विद्यालय जाना छोड़ देती हैं। (सिंघल, 2011) वर्ष 2015 के एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 11.5 करोड़ लड़कियां किशोरावस्था में थीं। किन्तु केवल 53% सरकारी स्कूलों में ही तत्संबंधी सुविधाएं विद्यमान थीं। ऐसी सुविधाओं के अभाव में स्त्री के आत्मसम्मान पर भी प्रत्यक्ष परिणाम होता है और इसको ध्यान में रखते हुए 2015 में केंद्र सरकार ने कुछ कदम उठाए।

•••

6. भारी धातुओं से होनेवाला प्रदूषण

'पर्यावरण आधारित स्वास्थ्य' के आखिरी उपघटक पर इस अध्याय में नजर डालते हैं। इसमें अपना क्रमांक है (180 देशों में) केवल 175! कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है क्योंकि पिछले कई सालों से अपने विकास के नशे में हमने इस समस्या की ओर ध्यान ही नहीं दिया। 16 जुलाई 2018 के दिन हरित अधिकरण ने अमृतसर और लुधियाना जिलों में ऐसे धातुओं के कारण होने वाले प्रदूषण में उल्लेखनीय सुधार करने के लिए फटकार लगाई। दस साल पहले तमिलनाडू में क्रोमियम की एक खदान धातु के अयस्क खुले पर ही छोड़ बंद पड़ गई। वह पूरा क्रोमियम भूजल में रिसता चला गया। करीब दो पीढीयाँ प्रभावित हुईं। बंगाल के चौबीस परगना जिले के उत्तर की ओर के एक गाँव में आर्सेनिक (हरताल) का भूजल में प्रमाण 1000 माइक्रोग्राम प्रति लीटर है। (विश्व स्वास्थ्य संगठन ने सुरक्षित मात्रा 10 माइक्रोग्राम प्रति लीटर निर्धारित की है।) पश्चिम बंगाल के 9 जिलों में करीब 1 करोड़ लोग यही आर्सेनिक-युक्त जहरीला पानी पीते हैं। पर, थोड़े-बहुत प्रयत्नों के अलावा वहाँ की सरकार ने कुछ नहीं किया। पूरे देश भर में भी यही परिस्थिति है। केंद्रीय जल आयोग द्वारा किए गए एक अनुसंधान के अनुसार भारत की 42 नदियों में कम-से-कम 2 भारी धातुओं के द्वारा प्रदूषण हो रहा है। गंगा प्रदूषित है क्रोमियम, तांबा, निकल, सीसा एवं लौह के कारण तो वहीं अर्कावती, ओरसांग, साबरमती, सरयू और वैतरणा नदियाँ कम-से-कम चार धातुओं को संतृप्त प्रमाण में ढो रही हैं। इन सभी घातक धातुओं में सर्वाधिक नुकसान सीसे के कारण होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने ऐसे 13 धातुओं की विनाशक के रूप में पहचान की है। : आर्सेनिक, कैडमियम, कोबाल्ट, क्रोमियम, तांबा, पारा, मैंगनीज , निकल, सीसा, टिन और टाइटेनियम। पर सीसा के अत्र, तत्र, सर्वत्र होने के कारण अधिक हानि होती है। यह धातु विश्व में सभी जगहों पर हवा, पानी धूल, मिट्टी और विभिन्न मानवीय उत्पादनों के द्वारा मानव तक पहुँच रहा है। सीसे से विषबाधा दो प्रकारों से होती है- क्रोनिक यानी कि दीर्घकाल और वारंवार सीसे से संपर्क में आने से और तीव्र या प्रखर यानी कि किसे स्थान विशेष पर, कुछ ही अवयवों तक सीमित जो कि कम संपर्क में आने से होती है। छोटे बच्चों में स्थान-विशेष यानी कि तीव्र विषबाधा अधिक देखने को मिलती है क्योंकि उनका दिमाग और शरीर प्रौढोंकी की तुलना में 4-5 गुना अधिक सीसा अवशोषित कर सकता है। इससे उनकी आकलन क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। प्रौढ़ों का सीसे से संपर्क

व्यवसाय, रोजगार, मजदूरी, आदि कारणों से होता है। बढ़ा हुआ रक्तचाप, गुर्दे विफल होना, हृदय की बीमारियों जैसे विकारों का प्रादुर्भाव होता है। सीसे का स्तर पता करने के लिए प्रति 1 ग्राम हड्डी में कितने माइक्रोग्राम सीसा है, यह गिना जाता है। प्रस्तुत सूचकांक भारी धातुओं से होने वाले खतरे को पहले ही परिचय कराए गए तरीके से गिनता है: एक लाख नागरिकों में, मानकीकृत आयु में, इस खतरे से जूझनेवाली जनसंख्या का औसत जीवन प्रत्याशा में हुई गिरावट।

कुल मिलाकर, भारी धातु विभिन्न तरीकों से शरीर में प्रवेश कर रहे होते हैं, पर मुख्यतः उनका मनुष्य से उनका संपर्क होता है खनन कार्यों और विभिन्न यांत्रिक उद्योगों जैसे कि- धातु शोधन कारखाने, पेट्रोकेमिकल उत्पादन, ऊर्जा परियोजनाएं, इलेक्ट्रोनिक उद्योग के कारण। जंग लगे हुए पुराने पाइप, अन्न, मैला पानी, और कचरास्थलों से भी संक्रमण होते हुए दिखाई देता है।विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा 2012 में किए हुए सर्वेक्षण के अनुसार करीब ६ लाख बच्चों में सीसे के कारण हल्के से माध्यम प्रमाण में मानसिक विकलांगता पाई गई। साँस और पेट के द्वारा वह शरीर में प्रवेश करती है और शरीर में अवशोषित होंने पर करीब -करीब प्रत्येक अवयव में पैठ कर लेती है । दाँतो और हड्डियों में तो सीसा सालों तक जमा रह सकता है। गर्भवती महिलाओं और भ्रूणों पर इसका अध्ययन तो हो ही चुका है 2017 के विश्व स्वास्थ्य संगठन के अध्ययन के अनुसार सीसा के अत्यधिक संपर्क में आने वाले बच्चों में जीवन भर का नुकसान करने वाले परिणाम देखने को मिले। इनमें वर्तन-संबंधी समस्याएँ, शारीरिक दोष, सीखने-जानने की क्षमता में दुर्बलता, फिर इससे विद्यालयीन प्रदर्शन में पतन होना, मादक पदार्थों की ओर झुकने की अधिक संभावना, कमाने की क्षमता समाप्त होना, आदि का सममावेश है।भारी धातुओं से होने वाले नुकसान तीन प्रकार के हो सकते हैं -आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय । स्वाभाविक रूप से, मिट्टी में सीसे का प्रमाण प्रति दस लाख भागों में 50 से 400 भाग ही है। किंतु शुरू से ही सीसा-युक्त पेट्रोल का ईंधन के रूप में उपयोग होते रहने का कारण और औद्योगिक प्रदूषण के कारण-विशेषतः सीसा गलानेवाली (smelters) भट्टियों के कारण उसी वायु में सीसा का प्रमाण बहुत अधिक बढ़ जाता है। वायु में स्थित सीसा जमीन पर स्थिर होने के पहले हवा में ही लंबे अंतर पार करता है। वह फिर से वायु में ही मिल सकता है, पानी में घुल सकता है अथवा पेड़-पौधों पर जमा हो सकता है। सच कहें तो, पृथ्वी के आंतरिक भाग में केवल 0.0013% सीसा है, पर जो है, उसकी निकासी करना बहुत सरल होने के कारण यह सब गड़बड़ हुई है। मानवीय खाद्य शृंखला में यह पेड़ों से प्रवेश करता है। उल्लेखनीय है, बहुत से यूरोपीय देशों ने

इस खतरे को भापकर काफी उपाय करना शुरू कर दिया है। यदि सामाजिक परिणामों को देखें तो एक बात स्पष्ट दिखाई देती है। वांशिक और आर्थिक रूप से दुर्बल जनसमूहों को अधिक भुगतना पड़ता है। आजीविका के साधनों से लेकर रोजगार के मार्गों तक और निकृष्ट गुणवत्ता के आश्रयों से लेकर चिकित्सकीय उपचार न मिलने तक इन खतरों का स्वरूप हो सकता है। मूल रूप से, सीसे से उत्पन्न बीमारियों से ग्रस्त 90% बच्चे अविकसित देशों में हैं। ऐसी जनसंख्या को सीसा-युक्त घातक सस्ते रंगों से रंगी हुई दीवारों वाले घरों में रहना पड़ता है। सीसा युक्त विद्युत यंत्रों को खोलने का काम करना पड़ता है।

आर्थिक दुष्परिणाम दिखता है व्यक्तियों की बचपन से घटी हुई उत्पादकता और अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाला चिकित्सकीय खर्चे का अतिरिक्त भार बचपन से सीसे के संपर्क के कारण निम्न और माध्यम आर्थिक वर्गों में घटती उत्पादकता का कारण विश्वभर में 97.7 करोड़ अमरीकी डॉलर का नुकसान हो रहा है। सीसे का उत्पादन, आयात, निर्यात, बिक्री और सीसा-युक्त रंगों के उपयोग पर विश्व में केवल 34 देशों में प्रतिबंध लागू है। इसी बीच विश्व में सीसे की मांग और उत्पादन बढ़ता ही जा रहा है। अम्ल एवं सीसा युक्त विद्युत यंत्रों और उनके पुनर्वितरण का इसमें 85% हिस्सा है। 2002 में 82 देशों में सीसा-युक्त पेट्रोल का उपयोग होता था। अब यह संख्या केवल 3 पर आ चुकी है। सिर्फ यही एक अच्छी बात है, ऐसा कह सकते हैं।

•••

7. जैव विविधता और विभिन्न अधिवासों की वर्तमान स्थिति

सूचकांक का दूसरा प्रमुख भाग यानी पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यक्षमता। इसमें सात उपघटक हैं। उनमें से एक है जैव विविधता और विभिन्न अधिवासों की परिस्थिति। इसमें हमारा क्रमांक है 180 देशों में 139। जैव विविधता मनुष्य को प्रकृति से जो अमूल्य सेवाओं का सचमुच मुफ्त में लाभ मिलता है, उनका प्राथमिक स्रोत है। प्रस्तुत विविधता के तीन स्तर विज्ञान द्वारा बताए गए हैं – पारिस्थितिकी तंत्रों में पाई जाने वाली विविधता, आनुवांशिक विविधता और प्रजाति विविधता । विभिन्न अधिवासों की परिस्थिति का यह उपघटक का दूसरा भाग भी इसी से संलग्न है। यह अधिवास किसी बड़े जैविक भौगोलिक परिप्रेक्ष्य – जीवोम (biome) के भाग हो सकते हैं। किसी विशिष्ट प्रकार की जलवायु को प्रतिक्रिया देते – देते प्राणियों एवं पक्षियों की विभिन्न प्रजातियों के सदृश समूह के रूप में विकसित होने के रूप में जीवोम की व्याख्या की जा सकती है। एक बायोम में कई अधिवास हो सकते हैं। वर्तमान परिस्थिति में ऐसी सभी प्रकार की विविधताओं को बड़े भयानक पैमाने पर खतरों का सामना करना पड़ रहा है। इनमें प्रमुख खतरे अधिवास खंडित होना, प्रकृतिक संसाधनों की बेशुमार लूट और उससे पड़नेवाला बोझ, प्रदूषण, बाहरी प्रजातियों का आक्रमण और जलवायु में परिवर्तन का समावेश है। इस उपघटक के गणना के लिए प्रस्तुत सूचकांक 6 मानदंडों का विचार करता है। इन मानदंडों की जितनी हो सके उतनी अचूक गणना अत्यंत जटिल, पेचीदा, वैज्ञानिक, अनेक चलों एवं अचलों का सांख्यिकीय समावेश कर बहुत अधिक समय खर्च करने वाली प्रक्रिया है। यदि प्रकृति के प्रति प्रेम, प्रतिबद्धता न हो तो इतना आग्रह संभव ही नहीं है। हम बड़ी ही सहजता से इस सब की समीक्षा कर तो रहे हैं, पर इन लोगों के कार्य की जितनी प्रशंसा की जाए कम है। ये 6 मानदंड इस प्रकार हैं :

1) **सागरीय संरक्षित प्रदेशों का प्रमाण :** किसी देश के सागरीय सीमाओं के अंतर्गत क्षेत्रफल का कितना प्रतिशत भाग संरक्षित प्रदेश के रूप में गिना जाता है।
2) **भूमि पर स्थित जीवोमों का संरक्षण :** इसमें देश भर के कुल बायोम का कितना प्रतिशत भाग संरक्षित प्रदेश है और इनकी संख्या को देश में स्थित सभी जीवोमों की संख्या से भारित किया जाता है ।

3) **भूमि पर स्थित जीवोमों का संरक्षण :** इस में देशभर के कुल संरक्षित प्रदेशों में बायोम का प्रतिशत और विश्व स्तर पर जीवोम की संरचना और संख्या से तुलना कर और भारित कर जानकारी प्राप्त की जाती है।

4) **प्रजाति–संरक्षण सूचकांक :** संरक्षित प्रदेशों और उसके बाहर के प्रदेशों में विभिन्न प्रजातियों का अस्तित्व , उनकी सुरक्षा और दोनों प्रकारों में किसी एक प्रजाति के हिस्से में आनेवाले क्षेत्रफल के द्वारा यह सूचकांक तय होता है।

5) **संरक्षित प्रदेशों में पारिस्थितिकी तंत्रों का प्रतिनिधित्व :** यानी किसी प्रदेश में उस भाग के विशिष्ट पारिस्थितिकी तंत्र का कितने प्रमाण में प्रतिनिधित्व होता है।

6) **प्रजातियों के अधिवासों का सूचकांक :** विभिन्न प्रजातियों के लिए विशिष्ट अधिवास होते हैं। वर्ष 2001 में निर्धारित किए गए भूभाग में से आज की तारीख तक कितने प्रतिशत भाग उन्हें नसीब हुआ है, इसका प्रमाण बताता है यह सूचकांक। इसमें और भी कुछ जानकारी की तरफ देखना जरूरी है। प्रजाति–संरक्षण सूचकांक देश में स्थित कुल प्रजातियों में से कितनी प्रजातियाँ उनके अधिवासों में सुयोग्य पद्धति से रह रही हैं, इसकी गणना होती है। इससे यह परिलक्षित होता है कि उस देश के संरक्षित प्रदेशों में कितनी जैवविविधता है । प्रकृति–संवर्धन,संरक्षण हेतु 2010 में संयुक्त राष्ट्र संगठन ने कुछ मापदंड निर्धारित किए हैं। कोई देश इन उद्देश्यों के कितने पास और कितने दूर है, यह इन मानदंडों से समझता है, यह इसका मुख्य उपयोग है। प्रस्तुत उद्देश्यों के क्र.11 के अनुसार किसी देश के जलीय एवं भूमिगत क्षेत्रफल के 17% क्षेत्रफल को मानवेतर जीवसृष्टि हेतु आरक्षित करना आवश्यक है। भारत में आज की तारीख में केवल 5% संरक्षित प्रदेश है।

संरक्षित प्रदेशों में पारिस्थितिकी तंत्र का प्रतिनिधित्व भी महत्वपूर्ण मापदंड है। क्योंकि इसमें ऐसे भूभागों का विचार हो रहा है जो आज तक उपेक्षित रही हैं पर उन पर मानवीय मौजूदगी है। इससे प्रजातियों को अधिक मात्रा में, अधिक अधिवास उपलब्ध होने की संभावना बढ़ जाती है।

प्रजातियों के अधिवासों के सूचकांक में पहले क्रमांक पर है ज़ाम्बिया देश। और भूटान 7 वें क्रमांक पर है! बीच में हैं बोत्सवाना, जर्मनी, इंग्लैंड, पोलैंड जैसे देश। अर्थात इसका मुख्य कारण है कि भूटान के पास सागरीय संरक्षित प्रदेश नहीं है । पर उनका कार्य इस मामले में भी उनका कार्य मार्गदर्शक है । और यदि इन देशों को 100 में से प्राप्त अंकों पर यदि आप नजर डालें तो उनमें कितनी प्रतियोगिता है, यह आपको समझ में आएगा। ज़ाम्बिया के अंक हैं 98.75, तो 7वें क्रमांक पर स्थित भूटान के

अंक हैं 96.30 । 180वें स्थान पर है अफगानिस्तान -11.14 अंक।

अब जैव विविधता और विविध अधिवासों की स्थिती को यदि हम व्यवस्थित रखेंगे तो मिलने वाले फ़ायदों और न रखने पर मिलने वाले खतरों पर नजर डालते हैं।

पर्यावरणिक : यदि जैवविविधता सम्पन्न रहे तो उससे अधिक अच्छा और विपुल प्राकृतिक पूंजी और पर्यावरणिक सेवाएँ प्राप्त होती हैं। वरिष्ठ पर्यावरणविद् श्री प्रकाश गोलेजी हमेशा कहते थे कि यदि जैवविविधता उत्तम हो तो आम आदमी का जीवन अधिक सुखी होता है। सस्ताई रहती है। यही सागरीय पर्यावरण के मामले में भी लागू है। उदा प्रवाल-भित्तियों के आश्रय में रहने वाली मछलियों का जलवायु परिवर्तनों के कारण होने वाला नुकसान बहुत कम हो जाता है अथवा उनकी तीव्रता कम हो जाती है। जलवायु परिवर्तन के कारण होनेवाले नुकसान यथार्थ रूप से कितने और कैसे होंगे, यह पहले पता चलना बहुत कठिन होता है। पर बाहरी प्रजातियों का बढ़ना, विस्तार होना और उनसे होनेवाले नुकसान निश्चित ही जलवायु परिवर्तन के कारण बनेंगे। कुछ नई प्रजातियाँ हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में घुसने वाली हैं।

सामाजिक : यह सभी घटक यदि ठीक-ठाक रहे तो, उनके सकारात्मक आयाम बड़े ही मूलभूत हैं। मानवीय खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं मानवीय जीवन को समृद्ध करने वाले अनेक सांस्कृतिक मूल्य अक्षुण्ण रहेंगे। विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्रों का समृद्ध होने का अर्थ है पानी और हवा शुद्ध होना, परागण होना, आदि प्राकृतिक सेवाओं का अबाध रूप से उपलब्ध होना। विश्व में करीब 40% दवाइयों का उत्पादन प्रकृतिक स्रोतों से होता है, उनका ठीक से चालू रहना। यदि सामाजिक दृष्टि से देखें तो जिन समूहों की जीविका और रहन-सहन अधिकांश रूप से जैवविविधता और पारिस्थितिकी तंत्रों पर निर्भर है, उनका बहुत नुकसान होगा। और उन्हीं के पास इन नुक़सानों से बचने के साधनों का सर्वाधिक अभाव है। और इसीलिए उनके अधिकारों के मूल स्रोतों को न छीनना बहुत आवश्यक है।

आर्थिक : सही मायने में, अगर विकास के कई मानदंडों में प्रकृतिक पूंजी और सेवाओं की कीमत यदि लागतों में पकड़ी जाए, तो उनकी लाभार्जन-क्षमता शून्य से भी नीचे चली जाएगी। यदि आपको अर्थव्यवस्था व्यवस्थित चाहिए, तो नीतियों के केंद्र में प्रकृति होनी चाहिए। कृषि और मछली पकड़ने जैसे कार्य ही आम आदमी को जीवित रखते हैं और छोटे पैमाने पर कमाई का साधन होते हैं। सीबीडी कार्यालय के 2018 के रिपोर्ट के अनुसार, विश्व की 50% जनसंख्या जीने के लिए जैवविविधता पर आधारित ऐसे उद्योगों पर निर्भर है। आर्थिक मामलों में भी यह विशेष है कि सागरीय प्रदेशों को संरक्षित करने का खर्च और उनसे मिलने वाले प्रत्यक्ष लाभों का

अनुपात 1: 3 से 1:20 तक हो सकता है। यानी उन का संरक्षण करना ही लाभदायक है। पर ये कौन सोचता है?

वैसे देखा जाए तो भारत ने ही जैव विविधता पर सबसे पहला कानून बनाया था। (2002) में । पर हमेशा का एक ही रोना : वह सिर्फ कागज पर सीमित रह गया। अनेक वर्ष आलस में गँवाने पर नीम, हल्दी के पेटंट के लिए लड़ी गई लड़ाइयों के बाद अब जाकर अरुणोदय हो रहा है । आजतक सम्पूर्ण विश्व के क्षेत्रफल के भूमि और मीठे पाने के प्रदेश में से 14.7%, कुल सागरीय विस्तार का 4.12% और सागरीय तटों में से 10.2% संरक्षित प्रदेश है यही एक अच्छी बात है।

•••

8. भारतीय वनों की दुरावस्था

पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यक्षमता का दूसरा घटक है वनों की दुरावस्था। इसे निर्धारित करने हेतु जिस सूचकांक का प्रयोग होता है, वह निर्देशक घटक है: किसी प्रदेश में वृक्षाच्छादन का घटता प्रमाण। पारिस्थतिकी तंत्र व्यवस्थित है कि नहीं, विभिन्न अधिवासों का संरक्षण हो रहा है कि नहीं, जलवायु परिवर्तन के कारण उठने वाली आपदाओं, खतरों के निराकरण वहाँ के वनों द्वारा हो रहा है या नहीं, ऐसी अनेक बातों पर इन घटकों के अध्ययन से प्रकाश डाला जा सकता है। और इसीलिए उनका चयन वन के स्वास्थ्य की गणना के लिए हुआ है।

चौबीस में से जिन 2 उपघटकों में अपना क्रमांक तुलना में ऊपर है, उनमें से ये एक है। वह है 180 देशों में से 68वाँ। वर्तमान केंद्र सरकार के परमिट के ढीले बँटवारे के कारण अगली बार 168वें स्थान पर हम पहुँच जाएंगे यह निश्चित है। और इस बार भी सूचकांक यदि उपग्रहीय प्रतिमाओं के सर्वेक्षण की अपेक्षा प्रत्यक्ष परिस्थिति (ऑन द ग्राउंड) पर ज़ोर देता तो चित्र कुछ और हो सकता था, इतनी भयंकर आंकड़ेबाजी भारतीय वनों को औद्योगीकरण के कारण झेलनी पड़ रही है। वनों के विनाश का परमिट अब एक क्लिक पर है। और ये जो थोड़े अच्छे क्रमांक हैं, वह संभव हुआ अनेक जागरूक संस्थाओं, वन संरक्षकों के रतजगे के कारण और मुख्य कारण है ''बाप की कमाई''। जो समृद्ध वन विरासत हमें पीढ़ियों से मिली है, उसका पुण्य है। हमारा कर्तृत्व बहुत छोटा है। वृक्षों का नाश जिन दस देशों ने पहले रोका उनमें अफगानिस्तान, पाकिस्तान, किर्गिजिस्तान और तजाकिस्तान जैसे देश हैं, यह सुनकर आश्चर्य होगा। पर, इन देशों में उनका क्षेत्रफल के केवल 2 या 3% वन ही बचे हैं। इसीलिए उन्हें यह अत्यंत आवश्यक कदम उठाना पड़ा। पर वे ऐसे कदम ले रहे हैं, यह महत्वपूर्ण है। इसके उल्टे, मलेशिया पाम तेल की निर्यात से मिलने वाले पैसे के मोह में पड़कर वनों का स्वास्थ्य खतरे में डाल रहा है और उसके कारण लगने वाली आगों की उपेक्षा कर रहा है। इसीलिए उसका क्रमांक नीचे है यानी 136 वाँ है।

वनाच्छादन के विनाश का प्रमाण सूचकांक द्वारा कैसे तय किया जाता है, यह भी देख लेते हैं। औसत रूप से 5 वर्षों की कालावधि में प्रतिवर्ष होनेवाले वनाच्छादन का विनाश यह 5 वर्षों में हर साल तय किया जाता है । किसी वर्ष में होने वाले विनाश का प्रमाण और उसके पहले का चार वर्षों के प्रमाणों की तुलना उसी स्थान पर 2000 के वनाच्छादन से की जाती है। उसी से यह सूचकांक मिलता है। वन अथवा जंगल

की व्याख्या भी अब सरल बना दी है- भूमि का वह भाग जो 30% से अधिक वृक्षों से आच्छादित है।

Global Forest watch नामक वैश्विक संस्था के पास 2001 से 2006 तक के सभी वर्षों में, 210 देशों की वनाच्छादन के विनाश की वाशिक जानकारी संकलित की गई है। यह जानकारी और उसके साथ ही गूगल, मेरीलैंड विश्वविद्यालय, और अमरीकी सरकार का भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण विभाग द्वारा देखी गई उपग्रहीय प्रतिमाओं की सहायता से इन आंकड़ों को अंतिम स्वरूप दिया जाता है।

प्राकृतिक वनों के मुख्य चार प्रकार: विषुवतरेखीय, उप-विषुवतरेखीय, समशीतोष्ण एवं उत्तरी गोलार्ध में स्थित शंकुधारी । वन के प्रत्येक प्रकार के लिए अलग खतरे है। खेती, औद्योगिक क्रियाओं और सड़क निर्माण के लिए पूर्ण नाश विषुवतरेखीय वनों की विशेषता बन गई है। निम्न-विषुवतरेखीय वनों की भूमि अधिकाधिक खेती और फसलों के लिए खतम की जा रही है। खनन, लकड़ी काटने का काम, सड़क निर्माण, आग और बाहरी प्रजातियों के आक्रमण के कारण, आंधियाँ और जलवायु परिवर्तन के कारण समशीतोष्ण वन नष्ट हो रहे हैं। उत्तर ध्रुव के पास स्थित शंकुधारी वन तुलना में सुरक्षित है। क्योंकि वे देश प्रकृति के मामले में बहुत जागरूक हैं। फिर भी, दावानलों और जलवायु परिवर्तन जैसे खतरे उन्हें भी हैं। मानव जाति को वृक्षों से होने वाले लाभ आजतक अनेक संस्थाएं और समूह चीख-चीख कर बताते रहे हैं। पर उनके शब्द केवल 'सरकार' नामक व्यवस्था को छोड कर सभी को सुनाई देते हैं। अभी प्रासंगिक है इसीलिए बता रहे हैं। ओझोन, सल्फर-नाइट्रोजन के यौगिकों से भरी जहरीली हवा, ऐसे अनेक प्रदूषकों को ये वन अवशोषित कर लेते हैं। कार्बन कासंचयन कर वे पृथ्वी की रक्षा करते हैं। निर्वनीकरण होने से बाढ़, भूस्खलन, मिट्टी का अपरदन जैसे अनेक पराकृतिक प्रकोपों का सामना करना पड़ता है। परागण और बीज-अंकुरण कर वनों की, पृथ्वी की वृद्धि सुदृढ करने के लिए अनेक मक्खियों, कीड़ों, पक्षियों, चमगादड़ों के वे आश्रय स्थल होते हैं। वे नाइट्रोजेन को स्थिर रखते हैं भूमि का अपरदन रोकते हैं और जल का मूल स्रोत की रक्षा करते हैं।

वनों के सामाजिक फायदे यानी खाद्यसुरक्षा, आश्रयस्थल और उपजीविका का साधन होना है। आज की तारीख में विश्व में करीब 30 करोड़ लोग जंगलों में रहते हैं। इनमें से वहाँ के भूमिपुत्र हैं 6 करोड। (संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट, 2015) । यही रिपोर्ट यह भी कहती है कि वनों का विनाश और वन नष्ट होने के कारण विश्व में निर्धन लोगों के कुल जनसंख्या में से 75% लोगों को इसकी मार झेलनी पड़ती है। 1.6 अरब लोगों की उपजीविका वनों पर आधारित है, यह भी यही रिपोर्ट बताती है। और

अर्थात अब आते हैं वनों के आर्थिक फायदे!। अगर अभी के समय में उन्हें नहीं बताया जाय तो फिर किसी भी चीज का कोई अर्थ नहीं है। 'जीडीपी' में भी वनों का हिस्सा होता है! खाद्य और कृषि संगठन के अनुसंधान के अनुसार वैश्विक जीडीपी का 0.9% हिस्सा वनों का है। विश्व भर में आज 5 करोड़ लोगों को ये ही वन रोजगार देते हैं। उनमें स्थित जैवविविधता अनेक प्रकारों से अर्थव्यवस्था को सुदृढ करती है। जिन औषधों को चिकित्सक लिख कर देते हैं, उनमें से 75% औषधियों में किसी वन की किसी वनस्पति का उपयोग किया जाता है। अगला सूचकांक अब 2020 में आएगा। तब हमारा क्रमांक कितना होगा, यह हम 2019 के चुनावों के आधार पर कुछ हद तक हम बता सकते हैं। समझदारों को इशारा काफी है !

•••

9. मत्स्य-ग्रहण में गिरती उत्पादकता

बाकियों की तुलना में इसमें हमें थोड़ा अच्छा क्रमांक प्राप्त हुआ है। इसमें हमारा क्रमांक है 180 देशों में 53वां । खाद्य सुरक्षा, रोजगार और आर्थिक उत्पादन तीनों की दृष्टि से मत्स्य-ग्रहण विश्व का एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत है। मछलियाँ सागरीय पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण अंग है। सभी गरीब, विकासशील देशों में मछलियाँ प्रथीनों और सूक्ष्म अन्न घटकों की पूर्ति करने वाला कारक है। संयुक्त राष्ट्र संगठन के खाद्य और कृषि विभाग के अनुसार 2014 में 5.6 करोड़ लोग मछली पकड़ने और सागरीय कृषि जैसे व्यवसायों में लिप्त हैं। यह सब होते हुए भी या फिर शायद इसी कारण विश्व भर की मछली के भंडार का 2016 तक की मूलक्षमता से 32% अधिक शोषण हो चुका था। (विश्व प्रकृति निधि, 2016) संयुक्त राष्ट्र संगठन की रिपोर्ट के अनुसार विश्व का मत्स्योत्पादन वर्ष 1996 में चरम सीमा पर पहुँच गया: 8.64 करोड़ टन । वर्ष 2017 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार इसमें प्रति वर्ष 12 लाख टनों की गिरावट होते हुए दिखी। मत्स्य-ग्रहण के अयोग्य प्रबंधन के कारण विश भर में करीब 8.3 करोड़ अमरीकी डॉलार का नुकसान होता है। इसीलिए, पर्यावरण सूचकांकों में मतस्योत्पादन की उत्पादकता का समावेश किया गया है। इसकी गणना दो मापदण्डों के अनुसार हुई। पहला, मच्छलियों का वर्तमान भंडार । प्रत्येक देश में एक संरक्षित आर्थिक सागरीय क्षेत्र होता है। उससे होने वाला उत्पादन की कुछ पद्धतियों का प्रयोग कर मत्स्य भंडार की वर्तमान स्थिति निर्धारित की जाती है। उस क्षेत्र में यदि आज तक के सर्वाधिक उत्पादन की मात्रा से 10 से 50% कमी आई हो तो ऐसे क्षेत्रों को over -exploited (अतिशोषित) प्रदेश कहा जाता है। यदि पूर्ण मछली भंडार सर्वाधिक उत्पादन के 10% के भी नीचे आ चूका हो तो उसे collapsed या नष्ट क्षेत्र कहा जाता है। इसमें सांख्यिकीय सटीकता लाने के लिए अन्य कई चल-अचलों का प्रयोग किया जाता है पर वह सांख्यिकीय प्रस्तुति यहाँ अवांछनीय है। यहाँ इतना बताना काफी है कि यह पद्धति सटीक है।

दूसरा निर्देशक है प्रादेशिक सागरीय पोषण मूल्य सूचकांक (Regional Marine Trophic Index). किसी सागरीय पारिस्थितिकी तंत्र में पकड़े जाने वाली मछलियों, जीवों की पोषण मूल्य स्तर औसत रूप से गिना जाता है। सतह पर रेंगनेवाले छोटे जीवों (Phytoplankton) से लेकर भारी भरकम मछलियों तक खाद्य शृंखला को ध्यानमें लिया जाए तो छोटे जीव पोषण मूल्य में नगण्य होते हैं। बड़ी मछलियों के

पोषण मूली अधिक हो सकती है। औसत रूप से ऐसे गिनने पर यह पता चलता है की मानव खाद्य शृंखला में सागर का शोषण करते हुए नीचे तक जा रहा है। इससे हानि का अंदाजा होता है। यह निर्देशक यदि स्थिर होगा तो परिस्थिति ठीक है। यह अगर नीचे की ओर जा रहा हो तो वहाँ के पारिस्थितिकी तंत्र में गड़बड़ है। अवैध, बिना पंजीयन के चलने वाला और अनियंत्रित मत्स्य-ग्रहण भी इस सूचकांक को प्रभावित करते हैं। अँग्रेजी में इसे IUU (Fishing- Illegal, Unreported and Unregulated) कहते हैं। विशेषतः पश्चिम अफ्रीका में और चीन में ऐसी प्रथा से खलबली मच गई है। टनों की मात्रा में चोरी से मछलियाँ पकड़ना और फिर उन्हें पास ही में शीतगृह जैसी सभी सुविधाओं से युक्त जहाजों में प्रत्यक्ष छिपाना । इसीलिए इस उत्पादन का कहीं रिकार्ड ही प्राप्त नहीं होता। यह भी बहुत होता है। ऐसी चोरियों पर प्रतिबंध लाने के लिए ओशियाना, स्कायट्रूथ और गूगल जैसी कंपनियों ने मिलकर एक उपग्रह आधारित प्रणाली खड़ी की है। किरिबाती जैसे बिलकुल छोटे से देश ने हाल ही में इसका उपयोग कर टूना मछली पकड़ने की फिराक में रहनेवाले एक जहाज को पकड़कर उसे 10 लाख अमरेकी डॉलर का जुर्माना ठोंका। ऐसे कार्यों से मानवेतर पर्यावरण को भी खतरा होता है। सागर के बढ़ते तापमान का परिणाम भी खाद्य शृंखला के निचले सिरे पर स्थित सूक्ष्म जीवों पर होता है. उनकी संख्या कम होने पर, उन पर आश्रित युवा मछलियों की संख्या कम होती है, उनकी प्रजनन क्षमता भी घट जाती है और कुल मिलाकर संख्या भी कम हो जाती है।

सागरीय पारिस्थितिकी तंत्रों का मूल स्वरूप भी बदल जाता है। भक्ष्य-भक्षक संतुलन भी बिगड़ जाता है। समुद्र का तल का विच्छेदन करनेवाली Bottom trawling, dredging जैसी प्रक्रियाएँ तो और भी अधिक विनाशकारी होती हैं क्योंकि उनमें खाने के लिए अयोग्य जीव भी बिना कारण पकड़े जाते हैं और अपनी जान खो देते हैं ऐसे बिनाकारण अपने प्राण गँवाने वाले जीवों को Bycatch कहा जाता है। (अंग्रैजी भाषा बड़ी अनोखी है, हर अच्छी-बुरी चीज के लिए इसमें संज्ञाएँ हैं!)

वर्ष 2000 से 2010 के बेच मेन 103 टन Bycatch व्यावसायिक नावों द्वारा फेंक दिया गया था। (Daniel Pauly and Zeller, 2016,p.3)। अवैध मछली पकड़ने वाले अपनी जालियाँ बहुधा वैसे ही पानी में छोड देते हैं। नियंत्रण खोने के कारण लापता, अथवा छोड़ी गई या फिर गैर-जिम्मेदाराना तरीके से पानी में फेंकी गई सामग्री को घोस्ट गियर कहते हैं। मार्च 2018 में केरल के दक्षिणी तट पर मछुआरों और पनडुब्बियों ने 400 किलो घोस्ट गियर समुद्र में से निकाला। 2011 से 2018

के बीच ऑलिव रिडले टर्टल नामल इंग्लैंड स्थित स्वयंसेवी संस्था ने मालदीव के पास घोसृ गीयर बाहर निकाला। उसमें 601 सागरीय समुद्री कछुए थे। उनमें 528 ऑलिव रिडले प्रजाति के थे। ऐसे गियर में व्हेल, डॉल्फिन, शार्क मछलिया और समुद्री पक्षी भी अधिक मात्रा में फँसने की घटनाएँ दर्ज हुई हैं। 2016 में सागरीय जीवविज्ञान का अध्ययन करने वाले एक समूह ने 76 अधिकृत अनुसन्धानों का अभ्यास कर 40 विविध प्रजातियों के 5,400 सागरीय प्राणियों एवं पक्षियों के ऐसे फेंके गए जालियों में फंसे होने की घटनाओं को दर्ज किया। इस मामले में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के कोच्चि स्थित केंद्र ने अप्रैल 2018 में अध्ययन कर केंद्र सरकार को एक प्रतिवेदन दिया। मतस्योत्पादन में गिरावट आने पर उसके सामाजिक परिणाम भी दिखाई देते हैं। क्योंकि सशक्त जीवन में स्वस्थ मत्स्य-ग्रहण की बहुत बड़ी भूमिका है। आज की तारीख तक 49 देशों के लोग उनके प्राणियों के स्रोतों से मिलने वाले प्रथीनों का 20% आवश्यकता सागरीय खाद्य से पूरी होती है। इनमें से 46 राष्ट्र गरीब हैं (उनके लिए प्यार का शब्द है विकासशील) । मछलियाँ हमें लौह, जस्ता, ओमेगा-3 संतृप्त आम्ल, आदि सूक्ष्म खाद्य घटक जैविक स्तर पर उपलब्ध होते हैं। मत्स्य -भंडार यदि इसी दर से कम होते रहे तो 84.4 करोड़ लोगों को भुखमरी और अकाल का सामना करना पड़ेगा, यह एक अनुसंधान से सामने आया है। आखिरी में, मत्स्य-ग्रहण के उचित प्रबंधन से मछलियों से मिलने वाला उत्पादन 1.6 करोड़ टन बढ़ जाएगा और उससे 5.3 करोड़ अमरीकी डॉलर फायदा होगा। क्योंकि मनुष्य बुद्धिमत्ता से काम लेगा और मत्स्य- जैव भार 2.7 गुना बढ़कर वार्षिक मतस्योत्पादन 13% से बेगा। मछली पकड़ने वाले देशों में 67% देशों ने पारिस्थितिकी तंत्र का विचार कर मत्स्य प्रबंधन शुरू किया है। इन दो मामलों को उम्मीद की किरण के रूप में देखा जा सकेगा। प्रत्यक्ष में क्या होगा क्या पता पर आशा तो रख सकते हैं, यह भी सच है।

•••

10. जलवायु और ऊर्जा-संबंधी परिस्थिति

सूचकांकों की गणना हेतु अगले उपविभाग हैं- जलवायु और ऊर्जा-संबंधी परिस्थितियाँ। इन्हें समझने हेतु हमें पहले कुछ संज्ञाओं का अर्थ मालूम होना चाहिए।इनमें सबसे पहले यह कि मौसम और जलवायु दोनों अलग-अलग संज्ञाएँ हैं। मौसम का अर्थ है किसी एक विशिष्ट स्थान, विशिष्ट समय पर जलवायु की स्थिति। वायु, तापमान, बादलों की स्थिति, आर्द्रता और वायुदाब वातावरण के भौतिक पहलू मौसम को स्पष्ट करते हैं। वहीं जलवायु का अर्थ है किसी प्रदेश के मौसम की दीर्घकालीन, वर्षों तक दिखाई देने वाली स्थिति। मौसम के हम अंदाज व्यक्त कर सकते हैं, जलवायु स्थान के अनुसार होती है। (उदा. जुलाई का महीना बड़ा ठंडा होता है)

हमारा इसमें क्रमांक है 180 देशों में 120वाँ। बाकी आंकड़ों की अपेक्षा ये ठीक हैं। पर इसमें लोचा ऐसा है कि भारत का कार्बन और उससे संबंधित उत्सर्जन केवल यहाँ की गरीब जनता की साधारण जीवन-शैली के कारण कम है वरना ऊपर वाले अमीर लोग बड़े पैमाने पर उत्सर्जन करते हैं। इसीलिए उत्सर्जन ठीक दिखता है।

जलवायु की परिस्थिति को निर्धारित करने के लिए प्रस्तुत सूचकांक जिन पाँच निर्देशकों का इस्तेमाल करता है, वे हैं - 1) सकल राष्ट्रीय आय की हर इकाई के पीछे होने वाला उत्सर्जन, मेट्रिक टन में 2) प्रति इकाई विद्युत उत्पादन के कारण होने वाला उत्सर्जन, मेट्रिक टन में 3) सकल राष्ट्रीय आय की प्रति इकाई के पीछे उत्पन्न होने वाला मीथेन, मेट्रिक टन कार्बन के समकक्ष मूल्य में 4) देश द्वारा वायु में उत्सर्जित नाइट्रस ऑक्साइड मेट्रिक टन कार्बन के समकक्ष मूल्य में 5) सकल राष्ट्रीय उत्पादन के प्रति इकाई के पीछे उत्सर्जित काला कार्बन (black carbon), गिगाटन में। जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध हमारी लड़ाई के प्रयत्नों के सटीक आंकड़ें सादर करने में प्रत्येक राष्ट्र को ऐसे मापदण्डों का बहुत फायदा होता है। अपने प्रदर्शन का आकलन करने में ये सहायक होते हैं। फिर भी, इन मापदण्डों की गणना बड़ी ही जटिल प्रक्रिया होती है। उदा. उपभोक्ता वस्तुएँ (consumer goods) तैयार किसी एक देश में होती हैं पर उनका उपयोग दूसरे में होता है। कई बार अपना देश स्वच्छ सुंदर रखने के लिए ऐसा खेल खेला जाता हा। फिर ऐसे उत्पादनों से होने वाले उत्सर्जन के लिए कौन जबाबदार है? उत्पादक देश या उपभोक्ता देश? आजतक, जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध की लड़ाई में गरीब और अमीर देशों में यह अत्यंत आवश्यक विषय था। हाल ही में आई हुई TCB (Technology adjusted Consumption based

accounting) पद्धति के कारण इस पुराने विषय पर विवाद अब लगभग खत्म हो चुका है।

भूमि उपयोग में होने वाले परिवर्तनों और वनोत्पादन, वानिकी (Forestry) में परस्पर संबंधों और गणना की जटिल प्रक्रिया एक चिंताजनक विषय था। हरितगृह वायु उत्सर्जन में 4% हिस्सा कृषि का था। इन सभी कारकों के कारण कार्बन बजट की गणना में सटीकता नहीं आरही थी। परिवहन क्षेत्र के कारण बढ़ता उत्सर्जन का विषय भी चिंताजनक था। इसे भी अब कई वर्ष हो चुके हैं।

सूचकांकों के इस भाग में वन एक अलग अर्थ से महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। उनका घनत्व यदि किसी कारणवश कम हो जाए तो उनसे होने वाला कार्बन उत्सर्जन 70% तक बढ़ जाता है। यानी अगले सूचकांक में हम निचले स्तर पर पहुँच जाएंगे। कार्बन डायोक्साइड के पीछे -पीछे सर्वाधिक पाई जाने वाली गैस है मीथेन। वातवरण में इसका प्रमाण मानवीय मूर्खता के कारण पिछले 250 वर्षों में दोगुना से अधिक बढ़ गया है। भले ही मीथेन वातावरण में 9-12 साल तक ही रहता हो पर ऊष्मा को संचित करने की उसकी क्षमता कार्बन डायोक्साइड से 34 गुना अधिक है न! विश्व के कुल मीथेन उत्सर्जन में 60% उत्सर्जन कृषि, जीवाश्म ईंधनों, कचरा -स्थलों और पालतू पशुपालन के कारण होता है। विश्व के कुल 6.23 करोड़ टन मीथेन उत्सर्जन में से जीवाश्म ईंधनों का उत्सर्जन है 1.32 करोड़ से 1.65 करोड़ टन।

एक और खतरनाक ऊष्मा का संचयन करनेवाली वायु है नाइट्रास ऑक्साइड । इसकी आयु बड़ी लंबी होती है - यानी कुछ 121-141 वर्ष और ऊष्मा संचयन की क्षमता कार्बन डायऑक्साइड से 300 गुना ज्यादा है। जलवायु, वायुचक्र और ओझोन के स्तर पर इसका गंभीर परिणाम होता है। विश्व में होने वाले कुल 6.9×10^{12} ग्राम वार्षिक उत्सर्जन में से 40% उत्सर्जन मानवीय गतिविधियों से होते हैं। औद्योगिक क्रांति के पहले के काल से यह 8 गुना अधिक है। जैव भार जलाना, जीवाश्म ईंधनों का बेशुमार उपयोग और कृषि-संबंधी गतिविधियों का इसमें क्रमशः 10%, 10% और 60% हिस्सा है । और अब बचा है काला कार्ब जो कि अत्यंत घातक है। सूक्ष्म-अतिसूक्ष्म धूल के कण प्रकाश को भी अवशोषित कर लेते हैं। उनसे ही यह तय्यार होता है। वातावरण में इसकी आयु बहुत अधिक नहीं है पर इसका उपद्रव मूल्य बहुत अधिक है। जीवाश्म ईंधनों का आधा कच्चा जलना इसका प्रमुख स्रोत है। वैश्विक तापमान वृद्धि में इसका बहुत बड़ा योगदान है - कार्बन के 900 गुना अधिक। आर्कटिकप्रदेश के तापमान वृद्धि में 30% से अधिक योगदान इस घटक का है। गर्मी बाहर फेंकने की जो विशेषता वातावरण में होती है, उसमें यह आमूल परिवर्तन कर

देता है। किसी सतह की परावर्तन-क्षमता भी यह बदल सकता है। वातावरण में साधारणतः दो हफ्तों के बाद वह पृथ्वी की सतह पर नीचे जम जाता है। दक्षिणी एशिया के जो करीब 1 अरब लोग हिमनदियों, मानसून इत्यादि पर निर्भर हैं- यानी कि हम लोग- उन्हें निकट भविष्य में इसी घटक से होने वाले नुक़सानों को झेलना पड़ेगा। इस सूचकांक में हम 180 में से 120 पर नीचे आगे हैं । यदि यह गिरावट रोकनी है तो सरकार को भी पर्यावरण पूरक होना पड़ेगा!

•••

11. वायु के प्रदूषक

वायु में स्थित प्रदूषक पारिस्थितिकी तंत्रों की एकात्मकता और उनका कार्यान्वयन दोनों ही बिगाड़ देते हैं। इनमें विशेषतः सल्फर और नाइट्रोजन के ऑक्साइड आम्लीकरन की प्रक्रिया के द्वारा मिट्टी और पानी की गुणवत्ता में गिरावट लाकर अधिक हानि कर रहे हैं। नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स सुपोषण के लिए कारणीभूत होते हैं। इसीलिए केवल कुछ विशिष्ट खाद्य घटकों का अतिरिक्त प्रमाण में इन तंत्रों में जमा होते हैं और जैविक चक्र बिगड़ जाते हैं। अन्यथा निष्क्रिय नाइट्रोजन, वायु में भी योगिक प्रक्रियाएँ कर पारिस्थितिकी तंत्रों में बढ़ कर विपरीत परिणाम कर सकता है। प्राकृतिक और कृषि-संबंधी विविधता को हानि पहुँचती है। परिणामों का निवारण करना लगभग असंभव होता है। और निराकरण के उपायों को लागू करने के बाद भी काफी समय तक उनका प्रभाव दिखता रहता है। इसीलिए पारिस्थितिकी तंत्रों के स्वास्थ्य संबंधी सूचकांकों में उनका समावेश होता है। भारत इसमें 180 देशों में 131वें स्थान पर है। अग्रलिखित जानकारी पढ़ने के बाद आप स्वयं ही तय करें कि अगली बार हमारे क्रमांक में कितनी गिरावट हो सकती है। SOx और NOx नामक संक्षिप्त नामों से पहचाने जानेवाले इन प्रदूषक कणों की गणना सूचकांक में होती है। यह Emissions Database for Global Atmospheric Research नामक वैश्विक स्तर पर मिलनेवाले जानकारी के भंडार (डेटाबेस) से मिली जानकारी के आधार पर है। वायुरूप और धूल के कणों से होने वाले प्रदूषण की वैश्विक स्तर पर अद्ययावत जानकारी रखने वाली यह एक वैश्विक प्रणाली है। वायु में स्थित प्रदूषकों की वातावरण में से 100 किमी से भी अधिक अंतर बहने की उनकी क्षमता उन्हें पर्यावरण हानि के ऊपरी श्रेणी में स्थापित करती है। इसका अर्थ यह निकलता है कि उनके उद्गम स्थान से बहुत दूर जाकर भी वह नुकसान कर सकते हैं। इनमें प्रमुख प्रदूषक हैं - सल्फर, नाइट्रोजन, भूमि के पास स्थित ओझोन, सूक्ष्म कण, भारी धातुओं के कण और टिकाऊ सेंद्रीय प्रदूषक। SOx और NOx और ये सभी साथ में ही होते हैं। सल्फर के ऑक्साइड मुख्यतः कोयले के जलाने से पैदा होते हैं। साथ ही जहाजों से होने वाले परिवहन और उद्योगों के कारण भी होते है। वहीं नाइट्रोजन की ऑक्साइडस आधे जले हुए ईंधनों से पैदा होते हैं। अध्याय 4 में इस संबंध में एक मुद्दे पर थोड़ी चर्चा हुई थी।

नाइट्रोजन के उत्सर्जन और सतह पर जमा होने के स्तर में 1995 की तुलना में 2050 तक दुगुनी वृद्धि होने लगेगी। ऐसा नाइट्रोजन सतह पर जमा होता है–आर्द्र और शुष्क दोनों रूपों में । आर्द्र रूप में जमा होने के पीछे कारण है आम्ल वर्षा (acid rain); अथवा अम्लयुक्त हिम अथवा बाष्प। शुष्क रूप में वे विभिन्न वस्तुओं पर प्रत्यक्ष रूप से ही जमा हो जाते हैं। इसका पर्यावरणीय नुकसान मुख्यतः जैव विविधता के नष्ट होने से दिखाई देता है। प्रोटीन्स और अन्य जैविक कणों में नाइट्रोजन होना जरूरी होता है।कई बार प्राथमिक–उत्पादन खाद्य शृंखला के लिए ये सीमित घटक भी होते हैं। यह प्रमाण यदि बिगड़ जाए और यौगिक नाइट्रोजन यदि अतिरिक्त मात्रा में तंत्र में घुस जाए तो पूर्ण चक्र में नाइट्रोजन का आधिक्य होकर कुछ वनस्पतियों के लिए यह जहरीला सिद्ध होता ही है पर साथ ही अमोनिया का बा हुआ स्तर, भूमि और पानी का आम्लीकरण और द्वीतीयक घटकों के लिए भी लाभप्रद सिद्ध होता है। भले ही सल्फर सीमित घटक न हो पर साधारणतः यही परिणाम उसके कारण भी होता है। सल्फर के 38 से 41% उत्सर्जन सागरीय सतह पर जमा होते हैं, वहीं भूमि पर अकृषि–संबंधी पेड़ों पर होते हैं। प्रस्तुत प्रदूषक सामाजिक नुकसान भी बहुत करते हैं। यदि एक बार पारिस्थितिकी तंत्रों की एकात्मकता और कार्यान्वयन एक बार खोजाए, विविधता का विनाश हो जाए तो उन पर निर्भर गरीब लोगों की जनसंख्या पर परिणाम होता है। खाद्य सुरक्षा और मानवीय स्वास्थ्य प्रभावित होता है। इससे संबंधित अधिक जानकारी हमने अध्याय 7 में ली है। धरोहर स्थल, ऐतिहासिक इमारतें, आदि सामाजिक और सांस्कृतिक विरासत को बहुत नुकसान पहुंचाते हैं। मथुरा रिफाइनरी और ताजमहल के उदाहरण पाठकों को याद होंगे। खेती की फसलें, मछली पकड़ना और प्राकृतिक औषधी वनस्पतियों ओर दुष्परिणाम, खाद्य घटकों के चक्रीय संचार को खतरा पैदा होमा, जैसे दुष्परिणाम तो होते ही रहते हैं। वायु प्रदूषण को कम करने या खतम करने के लिए जो खर्च आ सकता है उसकी तुलना में उससे होने वाले फायदे बहुत हैं। अमरीका का 'क्लीन एयर' कानून से बहुत फायदे हुए थे– 1 पर 12 शून्य डॉलर पर खर्च हुए थे केवल 6.5 करोड़ डॉलर पर फिर से वही तकिया कलम : पर कौन ध्यान देता है?

•••

12. जल के स्रोतों की परिस्थिति

पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यक्षमता में छटवा घटक है – जल स्रोतों की परिस्थिति। इस अध्याय में इस विषय पर नजर डालेंगे। हमारे उपयोग के द्वारा तैयार सभी प्रकार का मैला प्राणी किसी भी प्रकार की शोधन प्रक्रिया से न गुजरकर सीधे नदियों, तालाबों, सागरों में छोड़ दिया जाता है। इस मूर्खता का परिपाक है पारिस्थिति की तंत्र की व्यवस्था बड़े पैमाने पर प्रदूषित होकर स्वास्थ्य बिगाड़ना। परिणामतः, पानी से फैलने वाली बीमारियों से प्रतिवर्ष करोड़ों लोग मृत्यु को प्राप्त होते हैं। प्रकृति की हानि होती है वह अलग। विशेषतः पानी का सूखा जहां पड़ता है, उन देशों में यह हानि अधिक अनुभव की जाती है क्योंकि स्वच्छ पेय जल हासिल करने के प्रयत्नों के साथ-साथ ऐसी हानि से विपरीत परिणाम होते हैं। इसीलिए प्रस्तुत सूचकांकों में यह एक महत्वपूर्ण सूचकांक है। इसमें हमारा क्रमांक है 180 देशों में 107 वाँ । अपेक्षा के अनुसार बहुत नीचे। बिलकुल नीचे नहीं है, इसी में संतोष मान लेते हैं।

जो पानी पीने के लिए, कृषि में सिंचाई के लिए अथवा किसी भी मानवीय आवश्यकता हेतु अयोग्य माना जाता है वह होता है मैला पानी। ऐसी व्याख्या 2015 में इस सूचकांक में की गई थी। इस सूचकांक की गणना कैसे की जाती है देखते हैं। स्थानीय स्वराज्य संस्था के किसी भी प्रकार की शोधन प्रक्रिया (फिर वह भले ही प्राथमिक हो) से जुड़े हुए लोगों की संख्या के प्रमाण में, कितने मैले पानी का शोधन हो रहा है, इससे यह सूचकांक निर्धारित किया जाता है।संयुक्त राष्ट्र संगठन के 2017 की रिपोर्ट के अनुसार 80% मैला पानी किसी भी प्रकार की प्रक्रिया के बिना पर्यावरण में, प्रकृति में छोड़ दिया जाता है। मैला पानी का मुख्य स्रोत होता है घरेलू पानी, कृषि में प्रयुक्त पानी, औद्योगिक प्रक्रियाओं में प्रयुक्त पानी और सतह से बहने वाला पानी । घरों में उपयोग में लाए गए पानी में बीमारी के कीटाणु अधिक होने के कारण उनके फैलने में प्रमुख भूमिका होती है । इसी में दवाइयाँ, सौंदर्य प्रसाधन भी मिल जाते हैं। खेती के लिए प्रयुक्त पानी अपने साथ उर्वरकों के अतिरिक्त पोषक द्रव्य, संप्रेरक, इत्यादि ले आता है। औद्योगिक पानी के कारण घातक रसायन, धातुओं के अवशेष अथवा जल स्रोतों की उष्णता में वृद्धि करता है।

सतह पर बहने वाला पानी अपने साथ प्लास्टिक, तेल के अवशेष से लेकर जहरीले घटक धातुओं तक कुछ भी अपने साथ ला सकता है। यदि प्रत्यक्ष रूप से मौलिक मानव अधिकार मिलने हों तो स्वच्छ पानी और उससे संबंधित स्वच्छता

(sanitation) बहुत आवश्यक है और यह वास्तविकता संयुक्त राष्ट्र संगठन ने वर्ष 2010 में मान्य किया है। इस प्रदूषण के कारण प्रकृति पर होने वाले आघातों का, सामाजिक दुष्परिणामों का और अर्थात आर्थिक नुक़सानों की एक समीक्षा करते हैं। अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ प्रदूषण के कारण होती हैं। जहरीले प्रदूषक पानी के ऑक्सीज़न का प्रमाण कम कर जलीय जीवन को समाप्त कर देते हैं और उन पारिस्थितिकी तंत्र का भी नुकसान करते हैं। घरेलू और शहरी मैला पानी में भरपूर सेंद्रिय (organic) प्रदूषक होते हैं। ये विसर्जित ऑक्सीज़न को अवशोषित कर नुकसान करते है। कृषि से आया हुआ मैला पानी यानी नाइट्रोजन और फॉस्फरस का शिशुमंदिर। इनके कारण ऑक्सीज़न कम होता ही है पर साथ ही विशिष्ट खाद्य घटक अतिरिक्त प्रमाण में बढ़ जाते हैं और सुपोषण (Eutrophication) का खतरा बढ़ जाता है। जहरीले कीटनाशक, उर्वरकों के अंश जल में स्थित जीवों को समाप्त कर सकता है। सच कहा जाए, तो किया हुआ मैला पानी भी कई बार सुरक्षित नहीं होता। प्राथमिक प्रक्रिया के द्वारा केवल तैरते ठोस पदार्थ और बड़ी सेंद्रिय गंदगी ही निकाली जा सकती है । जिस पानी का पुनरूपयोग कर सिंचाई के लिए उपयोग करने से भूमि की क्षारता बढ़ जाती है। क्योंकि उस पानी में क्षार वैसे ही रह जाते हैं। गर्भ-निरोधक दवाइयाँ, चिकित्सकीय दवाइयों के अंश,आदि को 3-3 बार भी प्रक्रिया करने के बाद बाहर नहीं निकाला जा सकता है। ऐसी चीजों के बहुत थोड़े परिणाम भी जल में स्थित जीवों के लिए हानिकारक सिद्ध होते हैं। इससे उन्हें कर्करोग, जन्मजात दोषों का सामना करना पड़ता है। सामाजिक परिणामों में उन्हें हैजा, दस्त, आंत्र ज्वर (टाइफाइड) और पक्षाघात जैसी बीमारियों की संभावना बढ़ जाती है। पाचन तंत्र के माध्यम से फैलने वाले इन जीवाणुओं के कारण प्रतिवर्ष 1.8 अरब लोग ऐसे खतरों का सामना करते हैं। और उनमें से 13 करोड़ लोग मर जाते हैं। पानी लानी का काम अधिकतर औरते और बच्चों से करवाया जाता है। इसीलिए विद्यालय में जाने से लेकर स्वास्थ्य तक की सभी समस्याओं का बच्चे सामना करते हैं। स्वस्थ जीवन जीने का उनका अधिकार नष्टप्राय हो जाता है। और अब सभी विवेचनाओं का सिरताज- आर्थिक परिणाम ! यूरोप, अफ्रीका, और मध्य एशिया के भागों में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 17 स्थानों पर एक सर्वेक्षण किया । उसमें यह सामने आया कि सभी प्रकार की प्रक्रियाओं से पानी शुद्ध कर आपूर्ति करने पर यदि 1 डॉलर खर्च किया तो स्वास्थ्य-संबी उपचारों एवं उनसे संबंधित खर्चों के बचने से, मृत्यु दर घटने से हर डॉलर के पीछे 5-28 डॉलर का लाभ होता है। वर्ष 2011 में भारत के सभी बड़े शहरों में मैला पानी थी 4,07,150 लक्ष लीटर प्रतिदिन। 2017 में यही बढ़कर हो गया है

7,50,200 लक्ष लीटर प्रतिदिन । 10.72% दर से यह बढ़ रहा है। और जुलाई 2018 के आंकड़ों के अनुसार भारत की प्रक्रिया करने की वार्षिक क्षमता है केवल 2,60,663.1 लक्ष लीटर और इनमें से केवल 83% पर योजनाएँ ही सुचारू रूप से चल रही हैं। और हमारी सरकार किस दिशा में आगेकूच कर रही है, वह हम देख ही रहे हैं।

•••

13. कृषि की धारणक्षमता/ वहनक्षमता

पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यक्षमता का एक आखिरी उपघटक है कृषि की धारण क्षमता। इसमें हमारा क्रमांक है 180 में से 125वाँ। इस भाग में भले ही कृषि से संबंधित गतिविधियों पर भाष्य है पर वह उसकी उत्पादकता की तुलना में कितनी धारणाक्षम है यह देखने के लिए है। केवल फाइदा-नुकसान का विश्लेषण न कर नाइट्रोजन का होनेवाले विनियोग को देखा जाता है इस सूचकांक में। वस्तुतः कृषि का प्रकृति पर परिणाम तो होता ही है। उसका सांख्यिकीय विश्लेषण करने की दृष्टि से 5 प्रकार के सूचकांकों को ढूँढना आवश्यक है ऐसा World Resources Instituteने वर्ष 2014 में विश्व के सामने रखी। अभी तक इन सूचकांकों का निर्धारण सटीकता से नहीं हुआ है पर कृषि कैसे प्रकृति को प्रभावित करता है, देखते हैं:

1) पानी: जलस्रोतों पर कृषि का कितना दबाव है, इस सूचकांक से गणना होती है।

2) जलवायु परिवर्तन : कृषि के कारण उत्सर्जन होने वाले ऊष्मा का संचय करने वाली वायु कितने प्रमाण में हुकसान करते हैं, इसकी गणना करने वाला सूचकांक।

3) भूमि-उपयोग में होने वाले परिवर्तनों का तनाव : प्राकृतिक खेती के कारण होने वाले बदलावों को गिनने वाला सूचकांक

4) मिट्टी का स्वास्थ्य : मिट्टी की उत्पादकताऔर मिट्टी के स्वास्थ्य पर खेती का क्या प्रभाव पड़ता है , इसकी गणना करने वाला सूचकांक

5) प्रदूषण : कृषि में अतिरिक्त खाद्य घटक, कीटनाशक, आदि के कारण प्रदूषण में कितनी वृद्धि हो रही है, यह बताने वाला सूचकांक।

इन सूचकांकों का अभी तक सटीक व्याख्या न आने के कारण, कृषि की धारण क्षमता की गणना करने के लिए हमारा सूचकांक एक अलग ही निर्देशक का उपयोग करता है। आजकल की जाने वाली खेती में नाइट्रोजन उर्वरकों का उपयोग होता ही है। किन्तु उनका बिना सोचे-समझे किए जाने वाले उपयोग के कारण नाईट्रोजन से प्रदूषण अधिक होता है। वहीं किसी प्रदेश की खेती-व्यवस्था इस नाइट्रोजन का प्रबंधन खेती में किस प्रकार करती है, इसकी गणना कर, उस खेती का वहाँ के पारिस्थितिकी तंत्र में क्या परिणाम होगा, या हो रहा है, यह हमारा सूचकांक तय करता है। और वह है : Sustainable Nitrogen Management Index (SNMI) ।

इसका विवरण देखते हैं । NUE (Nitrogen Use Efficiency) नामक संज्ञा को समझना इसके लिए जरूरी है। उगाई गई फसल को यदि फसल में बहाए गए नाईट्रोजन से भाग दिया जाए तो NUE कहलाया। यह हुई नाइट्रोजन के उपयोग की क्षमता । उसीसे SNMI यह सूचकांक तय होता है। और उससे तय होता है की किसी क्षेत्र की खेती धारण क्षम है कि नहीं। यह मापदंड भी बड़ी ही सटीकता से, ध्यानपूर्वक तय किया गया है: भूमि की उपलब्धता के आज के आंकड़ें में बिलकुल भी बदल न हो तो 2050 में तय उत्पादन -उद्देश्यों को पाने के लिए लगनेवाले नाईट्रोजन का प्रमाण (एफएओ, 2016, पृ.क्र. 2)

कृषि के धारण सक्षम होने का जो मापदंड इस व्याख्या द्वारा तय किया गया है वह है 90 किग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टर प्रति वर्ष । इस आंकड़ें से खेती जितनी दूर होगी उतनी वह धारण अक्षम होगी ।

पहले के लेखों में विभिन्न घटक-उपघटक देखते समय हमने खेती के पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक परिणाम देखें हैं। उनकी यहाँ पुनरावृत्ति करने की अपेक्षा कृषि संबंधी कुछ निरीक्षणों को यहाँ देते हैं। विश्व की जनसंख्या 2050 तक 9 अरब होने वाली है। इस जनसंख्या के खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से अन्न उत्पादन में करीब 60% तक वृद्धि करनी है। पिछले 40 वर्षों में 30% अथवा अधिक खेती योग्य भूमि कम हो गई है। आज की तारीख में 8 करोड़ लोग कुपोषित हैं । 2050 तक उनमें और वृद्धि होगी। और आज कुल मिलाकर 40% लोगों को विश्व में रोजगार खेती के माध्यम से ही मिल रहा हैं। चीन और भारत देशों में उर्वरकों पर दी जाने वाले अनुदान इस सूचकांक में निंदा का विषय बनी हैं। क्योंकि इससे फसलों को बाज़ारों में मिलने वाली कीमतों का विचार न करते हुए उर्वरकों का निरंकुश उपयोग करने की प्रवृत्ति बढ़ती है।

•••

14. उपसंहार

जैसा कि प्रारम्भ में ही कहा गया था, विद्यमान विकासनीति के कारण प्रकृति अपरिवर्तनीय नुक़सानों को सामने लाने वाले यह आंकड़ें हैं। इस नुकसान का भीषण परिणाम हम सभी को आनेवाले समय में भुगतना पड़ेगा। यह एक विशिष्ट प्रकार की पर्यावरण-विरोधी विकासनीति का परिणाम है। संप्रति, सभी राजनैतिक दलों की नीतियाँ बिना किसी अपवाद के पर्यावरण विरोधी हैं। उन्हें बदल कर भारत की विकास नीति पर्यावरण-पूरक बनाने के लिए जनता के जिद्दी बाढ़ावे की जरूरत है। इस दृष्टि से जनजागृति होने के लिए यह लेखन उपयोगी सिद्ध होगा, यही आशा है!

•••